पेट के रोगों की

# प्राकृतिक चिकित्सा

—दिलराज सिंह

# —: विषय सूची :—

**नोटः**— पृष्ठ ८४ पर मत्स्यास[न] के विवरण में छठी पंक्ति में इस प्रका[र] पढ़ें—

दायें पैर का अंगूठा बायें हाथ [से] और बायें पैर का अंगूठा दायें हाथ [से] पकड़ें ।



卐

# भूमिका

भारतीय नगरों का जीवन अधिकांश में अप्राकृतिक होने के कारण जन साधारण विविध रोगों से घिरे हुये हैं, फलतः अधिकांश भारतीय नागरिक कर्तव्य कर्मों और जीवन के वास्तविक आनन्द से वंचित हैं। कहा जाता है उदर-विकार शरीरगत अनेक रोगों का जन्मदाता है, अतः उदर-विकारों से स्वयं को सुरक्षित रखना नितान्त अपेक्षित है। जिसका पेट हमेशा साफ रहता है, और मल का संचय नहीं होता। पेट के सभी पाचक और मल निस्सारक यन्त्र-अंग उचित गति से काम कर रहे हैं उसी को पूर्ण स्वस्थ माना जायेगा।

प्रकृति विरोधी आचरण को अपनाकर मानव ने पग-पग पर डाक्टरों व दवाओं की आवश्यकता उत्पन्न कर दी है। यह कैसी शोचनीय स्थिति है। जनता के इस कृत्रिम और व्याधिग्रस्त जीवन को समाज के हितैषी और प्रकृतिनिष्ठ महानुभाव चिन्ता की दृष्टि से देख रहे हैं और उसके प्रतिकार के लिये प्रयत्नशील हैं। प्रस्तुत पुस्तक के लेखक और प्रकाशक श्री० दिलराजसिंह अब से कुछ समय पूर्व शारीरिक दृष्टि से अतीव निर्बल थे। परन्तु प्राकृतिक नियमों के अनुसार अपनी जीवनचर्या बनाकर अपने सर्वांग का सचमुच कायाकल्प कर कर लिया है—जैसा कि उनके पूर्ववर्ती और परवर्ती चित्रों को देखने से पता चलता है। शारीरिक और मानसिक रूप में प्रकृति का यह वरदान-प्रसाद प्राप्तकर वे जनसाधारण में उसके वितरण के लिये उत्साहित हो उठे हैं। इसी उमंग में श्री दिलराज सिंहने उदर विकारों पर एक पुस्तक 'पेट के रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा' प्रकाशित की है। जनसाधारण के लिये यह पुस्तक इतनी उपयोगी है कि हर घर में इसकी एक प्रति रखना आवश्यक है।

लेखक ने अपने जीवन का सारा अनुभव इस पुस्तक में भर दिया है। जन-सेवा का उनका यह प्रयास और परिश्रम अभिनन्दनीय है।

—योगीराज उमेशचन्द्र जी

श्री रामतीर्थ योगाश्रम, दादर बम्बई-१४

पूजनीया माताजी के कमलरूपी चरणों में
सादर समर्पित

—दिलराज सिंह

स्वर्गीया श्रीमती महाराजी देवी

## — दो शब्द —

वर्षों से गठिया रोग से पीड़ित होकर नाना प्रकार की औषधियों की शीशियों से घर को औषधालय का रूप देकर एवं बड़े-बड़े प्रख्यात डाक्टरों के दरवाजों का चक्कर लगाकर निराश हो गया। हर सम्भव कोशिश करने पर भी अपना खोया हुआ स्वास्थ्य प्राप्त न कर सका। निराश हो समझ लिया कि अपना जीवन इसी प्रकार की दुर्दशा में ही बीतेगा। स्वास्थ्य किस चिड़िया का नाम है; सपना हो गया था। परन्तु एक प्राकृतिक-चिकित्सा प्रेमी की प्रेरणा एवं दबाव से प्रभावित होकर प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लिया। सर्व श्रेष्ठ प्राकृतिक चिकित्सक डा. कुलरंजन मुकर्जी, डा. विठ्ठलदास मोदी, डा. खुशीराम दिलकश इत्यादि द्वारा लिखित भिन्न भिन्न प्राकृतिक चिकित्सा संबंधी पुस्तकों का अध्ययन किया, उन्हीं के आधार पर अपना खोया हुआ स्वास्थ्य प्राप्त किया। फलतः इस चिकित्सा के प्रति मेरे हृदय में अटूट श्रद्धा उत्पन्न हुई है, उसी को स्थायी रूप देने के लिये मैंने अपनी स्वर्गीया माता जी के नाम पर "श्री महाराजी प्राकृतिक चिकित्सालय" की स्थापना १९६० में की। निराश रोगियों से मिलकर तथा उनकी सेवा में लगे रहने से मुझे विशेष प्रसन्नता होती है। क्योंकि अपनी अवस्था की कल्पना पर सब लोगों के रोगों एवं कष्ट का अनुभव करता हूँ।

आशा है अपने स्वास्थ्य से प्रेम करने वाले बन्धुजन इस पुस्तिका का आधार लेकर यदि अपने पेट को औषधालय बनाने से बचायेंगे तो इसीमें मैं अपने को सफल समझूंगा।

उपरोक्त प्राकृतिक चिकित्सको के अनुभवों के साथ अपने अनुभवों को मिलाकर इस छोटी सी पुस्तक को जनता जनार्दन की सेवा में प्रस्तुत किया जा रहा है। इसमें जो कुछ विशिष्ठ है वह गुरुजनों का है और जो कुछ तुच्छ है वही मेरा है।



—दिलराज सिंह

# पेट के रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा

## प्रथम अध्याय

### रोग

प्रकृति द्वारा निर्मित काया जब कभी नाना प्रकार के विकारों से बोझिल हो जाती है तो स्वयं अपनी आरोग्य मूलक-क्षमता को बढ़ाकर तरह तरह के उपायों द्वारा शरीर को शुद्ध करने की कोशिश करती है। इसे ही हम सामान्य भाषामें रोग कहते हैं। प्रायः प्रकृति शरीर की सफाई तीव्र रोग से ही करती है। तीव्र रोग जो भी होते हैं, वे सभी हमारे शरीर को शीघ्र स्वच्छ करने का उद्देश्य रखते हैं। इंगलिश में एक कहावत है:— "Give me fever, I will cure"

[ मुझे बुखार दो मैं उपचार करूँगा। ]

परन्तु मूर्खता--वश हम प्रकृति के इस कार्यमें बार बार बाधा डालते हैं। बार बार बाधा डालने का परिणाम भयंकर रूप धारणकर प्रकृति की आरोग्य-मूलक क्षमता पर ही आक्रमणकर उसे विनिष्ट कर देता है। आरोग्य मूलक--क्षमता, हमारी उन गलतियों से जब हम तीव्र रोगों से छुटकारा पाने के लिये तरह २ की औषधियों, रासायनिक इन्जेक्शनों आदि दवाओं का

प्रयोग करते हैं; नष्ट हो जाती है । इससे रोग अच्छा होना तो दूर रहा, उल्टे प्रकृति की प्रक्रिया में रुकावट आ जाती है; जिसके द्वारा हमारे शरीर का विकार निकलता है । वही विकार शरीर के अंदर ही अंदर पड़ा सड़ा करता है । जैसे आबादी वाले गांव में कूड़ा करकट जमा होकर बीमारी फैलाता है; वैसे ही शरीर की गंदगी बाहर न निकल पाने पर अंदर ही अंदर सड़कर नाना प्रकार के विकारों से सम्पूर्ण शरीर के रक्त को विषैला तथा प्रत्येक अवयव को शक्तिहीन बना देती है ।

प्रकृति फिर भी दीन-हीनावस्था में रहते हुये भी शरीर को स्वच्छ तथा विकाररहित करने की कोशिश करती है । प्रकृति का स्वभाव ही शरीर की शुद्धि करते रहने का है । इस निर्जीव अवस्था में जो रास्ता प्रकृति अपनाती है; उसे ही हम जीर्ण-रोग की संज्ञा देते हैं; जो कि रासायनिक औषधियों की देन है ।

परन्तु रोग एक दिन में कभी जीर्ण नहीं होता । प्रकृति की क्रियाओं में बार बार बाधा डालने से प्रकृति कमजोर हो जाती है; और जीर्णरोग का आविर्भाव होता है ।

नये रोग तो किसी भी चिकित्सा प्रणाली से अच्छे किये जा सकते हैं; परन्तु जीर्णरोग प्राकृतिक चिकित्सा को छोड़कर अन्य किसी भी चिकित्सा द्वारा समूल नष्ट नहीं किया जा सकता है ।

यदि प्रकृति का साथ लेकर हम अपने शरीर को विकारों से रहित तथा देह के सभी अवयव सबल बना लें; तो हमें आसानी से किसी भी रोग से मुक्ति पा सकते हैं । इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य की कल्पना करना व्यर्थ ही है ।

शरीर के विकारों को निकालने के लिये प्रकृति के कुछ खास रास्ते हैं। जैसे:—मल, मूत्र, पसीना और श्वास द्वारा ही विकारों का निष्कासन होता है। लेकिन कभी जब इन रास्तों से विकारों का निकलना असंभव हो जाता है: तो प्रकृति और ही रास्ता अपनाती है; जो कि विकारों के निकलने के रास्ते नहीं रहते; इसी प्रतिक्रिया को ही हम रोग कहते है।

प्राकृतिक चिकित्सा में मल, मूत्र, पसीना श्वास आदि द्वारा विकारोंको निकालने की कुछ विधियां हैं; प्राकृतिक चिकित्सा उन्हीं प्रयोगिक विधियों पर निर्भर करती है। इसलिये उन प्रयोगिक विधियों को अच्छी तरह जान लेना अति आवश्यक है, क्योंकि इसका प्रयोग भी रोग के अनुकूल ही करने पर लाभ होता है। अन्यथा नहीं। जिस प्रकार अलग अलग रोग के अलग अलग लक्षण होते हैं, उसी प्रकार लक्षणों को ध्यान में रखते हुये अलग २ प्रयोगिक चिकित्सा विधि भी हैं। इन प्रयोगिक विधियों को जानने के लिये अंतिम अध्याय पढ़िये।

प्राकृतिक चिकित्सा में दवा नाम की कोई वस्तु नहीं है। यदि है भी तो पथ्य। दवा की सहायता से जिस स्वास्थ्य: प्राप्ति की हम कल्पना करते हैं, उसी स्वास्थ्य को दवा की एक बूंद बिना पिये ही पानी, मिट्टी, धूप, हवा, आसन, व्यायाम, मालिश, उपवास, भोजन सुधार आदि की सहायता से बिना खर्च प्राप्त कर सकते हैं।

\+ \+ \+ \+

यह शरीर मिट्टी, पानी, धूप, हवा और आकाश द्वारा बना है। बिगड़ जाने पर इन्हीं के समुचित उपयोग से यह फिर से नया हो जाता है।

# द्वितीय अध्याय

## पेट के रोग

### पेट दर्द

आँतों के दर्द को ही हम पेट दर्द कहते हैं। पेट में दर्द होने के कई कारण हैं। इसका शीघ्र निर्णय करना कि पेट में दर्द क्यों हो रहा है कठिन है। मूत्रपथरी, पित्त-पथरी, अपेन्डिक्स आदि रोगोंसे भी दर्द होता है। नाभी के अपने स्थान से हट जाने से भी पेट दर्द हो सकता है। स्त्रियों के दर्द का पता लगाना तो बहुत ही मुश्किल है, क्योंकि उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त और भी स्त्री-रोग हैं जिनसे दर्द होता है। प्रायः मासिक के समय तो थोड़ा बहुत दर्द होता ही है।

**कारणः**—शरीर जब नाना प्रकार के विषैले पदार्थों से ग्रसित हो जाता है, तो प्रकृति उसकी सूचना पेट दर्द द्वारा इंगित करती है।

हम लोग इस दर्दको बन्द करने के लिये नाना प्रकार की औषधियों का सेवन करते हैं, जिससे दर्द शीघ्रातिशीघ्र बन्द हो

जाता है। लेकिन इसका परिणाम कुछ और ही होता है, प्रकृति जिस शक्ति के बल पर पेटमें दर्द करती है, उस शक्ति का औषधि गला घोंट देती है।

दर्द हमारे घर की रखवाली करनेवाले उस स्वामीभक्त कुत्ते के समान है जोकि चोर के आने पर भौंकता है, मालिक को चौकन्ना कर देता है तथा साथ ही साथ किसी आकस्मिक घटना होने की सूचना देता है। कुत्ते की इस क्रिया की मालिक अवहेलनाकर धोखा खाता है, और यदि उसका तनिक भी ध्यान करता है तो उसकी रक्षा हो जाती है। इसी प्रकार दर्द भी हमारे शरीर रूपी घरका रखवाला है तो हमको अवश्य ही अपने हितके लिये उस ओर ध्यान देना चाहिये। रोगी को चाहिये कि दर्द को औषधि द्वारा बन्द न कर, पेट को साफ करने की क्रिया करनी चाहिये। जिससे पेट भी साफ हो जाय और दर्द भी बंद हो जाय।

**उपचार**—पेटमें दर्द किन कारणों से हो रहा है, पता लगाना साधारण चिकित्सक के बस की बात नहीं है, लेकिन चाहे जिस किसी भी कारण से पेट में दर्द क्यों न हो, पेट पर गर्म-ठंडी सेक देकर गर्म पानी का एनिमा ही इसका प्रमुख इलाज है, इसलिए बिना छानबीन किये ही रोगी को सर्व प्रथम पेट पर तीन चार गर्म ठंडा सेक देकर सहन करने योग्य गर्म पानीका एनिमा लेकर पेट साफ कर लेना चाहिये। उपरोक्त क्रिया ही रोगी के लिये पर्याप्त है। यदि इस क्रिया से भी दर्द दूर न हो तो इसी क्रिया को पुनः करना चाहिये। इससे पेट भी साफ हो जाता है और दर्द भी निकल जाता है। रोगी के पेट पर ढकी हुई मिट्टी की पट्टी बदल-बदल कर लेना चाहिये। मिट्टी की पट्टी के बदले भीगे कपड़े की पट्टी भी ले सकते हैं।

**पथ्य**—पेट दर्दके रोगी को तीव्र अवस्था में उपवास करके रहना चाहिये। रोग का आक्रमण दूर हो जाने पर रोगी कच्चे नारियल का पानी, छेने का पानी लेकर अपना पथ्य क्रमशः बढ़ाकर धीरे-धीरे अपनी पूरी खुराकपर आ सकता है। इससे पेट का दर्द तो दूर हो ही जाता है, साथ ही साथ दूसरे रोगों का भी आक्रमण समाप्त हो जाता है।

## दस्त

प्रायः मनुष्य का दिन में दो बार पेट साफ होता है। लेकिन कभी-कभी इतने से भी पेट की सफाई नहीं हो पाती, तो प्रकृति इसी रास्ते पर विशेष जोर देकर पेट की सफाई में लग जाती है। इस प्रतिक्रिया के बार-बार होने पर दिन में कई बार शौच जाना पड़ता है। इस क्रिया को ही हम दस्त लगना कहते हैं।

**कारणः**—अधिक मात्रा में भोजन करना तथा देर से पचने वाले पदार्थ खाना एवं सड़ा गला बासी खाना खाने से दस्त की बीमारी शुरू हो जाती है। प्रायः ऋतु-परिवर्तन, ठंडक लग जाने, अशुद्ध पानी पीने से भी दस्त की बीमारी शुरू होती है। रेचक औषधियों से तो अवश्य दस्त होने शुरू हो जाते हैं।

**लक्षणः**—दस्त के साथ-साथ कभी-कभी उल्टी का भी वेग होता है, कभी पेट में मरोड़ पैदा होती है। ऐसी क्रिया तब होती है जब आंत में चिपके हुये मल को छुड़ाने अथवा तोड़ने की चेष्टा प्रकृति करती है। मरोड़ होकर दस्त होना, उल्टी, भूख की कमी, जीभ का गंदापन, दुर्गंधयुक्त श्वास

नाममात्र सिर दर्द आदि लक्षण इस रोग में प्रतीत होते हैं। रोग के कुछ दिन रह जाने पर दुर्बलता एवं कमजोरी आती है। प्रकृति जिस उद्देश्य से दस्त की बीमारी उत्पन्न करती है, उसे पूरा कर देना ही इलाज है।

**उपचारः**—शरीर में एकत्रित दूषित मल दस्त-रूपमें जब तक बाहर निकल रहा है, तब तक कभी भी औषधि की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि औषधि से काम में बाधा आ जायगी। जब पेटसे दूषित मल बाहर निकल जायगा तो प्रकृति स्वयं अपना कार्य सही ढंगसे करने लग जायगी।

रोगी को सबसे पहले पेट पर गर्म ठंडा सेक लेकर गर्म पानी का एनिमा लेना चाहिये। पानी का तापक्रम उतना अधिक होना चाहिये, जितना वह सह सके और पानी की मात्रा भी उतनी ही होनी चाहिये जितना रोगी ले सके। इस क्रिया से पुराना रुका हुआ मल बाहर निकल जाता है और बार २ शौच का जाना भी बन्द हो जाता है। इसलिये बिना सोचे-समझे इस रोग में रोगी को एनिमा लेकर पेट साफ कर ही लेना चाहिये। इस रोग में प्रायः पेट बहुत अधिक गर्म रहता है, इसलिये मिट्टी की पट्टी पेट पर रखनी चाहिये, जिससे दर्द, गर्मी आदि भी अतिशीघ्र कम हो जाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा में पुराने मल को बाहर निकालने के लिये उपरोक्त प्रयोग से बढ़कर कोई क्रिया नहीं है। पट्टी को पेट की गर्मी के अनुसार कई बार बदल-बदलकर लेना चाहिये। यदि पेट गर्म न हो तो गर्म ठंडा सेक लेकर पेट को गर्मकर मिट्टी की पुटलिस का प्रयोग करना चाहिये। इसके अतिरिक्त रोगी ढकी हुई पेट की पट्टी भी ले सकता है।

कटिस्नान भी इस रोग में काफी गुणकारी प्रयोग सिद्ध हुआ है। पेट गर्म रहने पर कटिस्नान बार बार लिया जा सकता है। कटिस्नान के समय पांव ठंडे हों तो गर्म पानी में या गर्म थैली के ऊपर पांव रखकर, लेना चाहिये। कटिस्नान के बाद पेट रगड़रगड़कर गर्मकर लेना चाहिये। इसी क्रिया को दो या तीन बार कर लेने पर चमत्कारिक लाभ होता है, दस्त बन्द हो जाता है और आराम भी मिलता है।

यदि रोग ठंडक लग जाने से शुरु हुआ है तो भापस्नान से भी लाभ होता है। ऐसी अवस्था में, भापस्नान, पाद स्नान या कम्बल ओढ़कर पसीना निकाल लेना चाहिये। अक्सर पेट सेकने मात्र से ही बहुत अधिक मात्रा में पसीना निकल आता है और रोगी अच्छा हो जाता है। क्योंकि जो विष प्रकृति आंत के रास्ते निकालने की चेष्टा करती है, वही विष-धारा पसीना निकाल देने से त्वचाद्वार की तरफ मुड़ जाती है और दस्त बन्द हो जाता है। दस्त के साथ-साथ उल्टी के वेग को भी नहीं रोकना चाहिये, क्योंकि वह शरीर की सफाई क्रिया में सहायक है।

रोगी को दो–चार गिलास गुनगुने पानी को पीकर, हाथ की दो बड़ी अँगुलियों से गले में खराश कर उल्टी कर लेना चाहिये, परन्तु उल्टी हमेशा गुनगुने पानी से ही होगी अधिक गर्म पानी से नहीं। लेकिन जब उल्टी में पानी के सिवा कुछ न निकले तो बन्द कर देना चाहिये। इसके लिये रोगी को बर्फ चूसना चाहिये। इस सब चिकित्सा के बाद रोगी को सिर धोकर गुनगुने पानी से स्पंज दिन में दो बार अवश्य कर लेना चाहिये।

**पथ्य**- रोगीको जबतक स्वाभाविक भूख न लगे तबतक उसे उपवास ही रखना उत्तम होगा। क्योंकि प्रकृति अपनी सारी शक्ति शरीरकी सफाई

में लगाये रखती है। ऐसी दशा में पाचन क्रिया बन्द रहती है, भूख नहीं लगती। नींबू के रस के साथ अधिक मात्रा में पानी पीकर उपवास करे। भूख लगने पर सर्वप्रथम मठा (छाछ), छेने का पानी इत्यादि से रोगी को उपवास तोड़ना चाहिये। कुछ दिन इसी पथ्य पर रहकर फिर भात का माँड, भात, दही आदि लेने लग जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त देर से पचनेवाले पदार्थ नहीं खाने चाहियें। दूध, मिठाई, साग, सभी तरह के फल, तेल में तली हुई चीजें बन्द रखना अति उत्तम होगा, क्योंकि इन सब पदार्थों से दस्त विकार बढ़ जाता है।

## पेचिश ( डिसेन्ट्री )

दस्त की तरह पेचिश में भी बार-बार शौच जाना पड़ता है। परंतु दस्त और पेचिश में कुछ अन्तर है। दस्त से पेचिश भयंकर रोग है।

**लक्षणः—** प्रायः इसमें दस्त के बाद आंव, कभी खून, कभी मछली धोने जैसा पानी निकलना, मलद्वार पर लहर, कूथना, सिरदर्द, माथा चकराना, और पेट में जोर से दर्द होना, भूख की कमी, प्यास की तीव्रता, हाथ-पांव ठंडे, नाड़ी तेज, कमजोरी तथा १०२-१०३ तक बुखार आदि प्रधान लक्षण हैं।

**कारणः—** यह रोग एक प्रकार के कीटाणु द्वारा पैदा होता है। परन्तु कीटाणु भी पैदा उसी स्थान पर होते हैं जहां उनको उपयुक्त वातावरण मिलता है वह स्थान है बड़ी आंत। जब कभी पुरानी कोष्ठ-बद्धता के कारण आंत में घाव हो जाता है तो उसी घाव में इस रोग के कीटाणुओं का जन्म होता है।

यदि दो मोसम्बी एक स्थान पर रख दी जायँ जिसमें एक सड़ी हुई हो और दूसरी अच्छी अवस्था में। यदि अच्छी अवस्था वाली मोसम्बी पर कुछ कीड़े रख दिये जांय तो वे कुछ देर के बाद मरे हुये मिलेंगे। किन्तु सड़ी हुई मोसम्बी पर कीड़े न होते हुये भी वह भयानक कीटाणुओं

से परिपूर्ण मिलेगी। ठीक उपरोक्त उदाहरण की तरह मनुष्य के शरीर की भी गति होती है। जब तक शरीर विषैले पदार्थों एवं विकारों से रहित रहता है तबतक किसी भी प्रकार का रोगोत्पादक कीड़ा पैदा नहीं हो सकता और जब शरीर विकारों से बोझिल हो जायगा, आंतें दुर्बल हो जायेंगी, तभी कीटाणु उत्पन्न होंगे और नाना प्रकार के रोग पैदा होंगे। इसलिये बड़ी आंत की सफाई के साथ साथ समस्त शरीर की सफाई करना ही मुख्य इलाज है।

**उपचारः—** पेचिश की बीमारी बड़ी आंत से ही पैदा होती है इसलिये बड़ी आंत को गुनगुने पानी के एनिमा द्वारा साफ कर लेना चाहिये। इस बीमारी में एनिमा हमेशा दाहिनी करवट ही लेना चाहिये। पेट में पानी धीरे-धीरे उतरना चाहिये, क्योंकि जोर से पानी उतरने पर हानि पहुँचने का भय रहता है। एनिमा लेने के बाद गर्म ठंडा सेक लेकर गीले कपड़े की पट्टी रखनी चाहिये, रोग की ओर ध्यान रखते हुये उपरोक्त क्रिया दिन में कई बार करनी चाहिये। इसी चिकित्सा के बल पर रोग को काबू में किया जा सकता है। यही इसकी प्रधान चिकित्सा है।

रोगी का शरीर गर्म रहे तो उसे कटिस्नान लेना भी अति उत्तम है। गर्म पैर स्नान लेकर पूरे शरीर को गीले रूमाल से पोंछ लेना चाहिये। सिर को दिन में कई बार धोना, एवं दिन में दो बार पांव की पट्टी लेना भी लाभदायक है। पट्टी खोलने के बाद गीले रूमाल से पूरे शरीर को पोंछ लेना चाहिये। रोग का जबतक प्रकोप रहे तब तक आराम की अति आवश्यकता है इसलिये रोगी यदि खाट पर ही पड़ा रहें तो अच्छा होगा।

**पथ्य**—रोगीको नींबूका रस पानीके साथ लेकर उपवास करना चाहिये। दस्त-बीमारी की भांति इसमें भी मट्ठा अति उत्तम पथ्य है। मट्ठे से पेट के सभी अनिष्टकारी जीवाणु नष्ट होते हैं और शरीर एवं स्वास्थ्य

रक्षक कीटाणु पैदा होते हैं। इसलिये रोगी को कुछ दिन तक मट्ठा पीकर ही रहना चाहिये। इसी क्रिया को प्राकृतिक चिकित्सा में मट्ठा कल्प भी कहते हैं।

पथ्य में, पुरानी इमली की चटनी के साथ मुलायम भात, बहुत अधिक पका केला नमक के साथ लेना हितकर है। इसके अतिरिक्त प्रातःकाल कच्चा वेल आग में भून कर खायें और इसी पथ्य पर कुछ दिन तक रहें। वीमारी छूट जाने पर भी रोगी को कुछ दिन तक उपरोक्त पथ्यों पर ही रहना चाहिये। अन्ततोगत्वा परवल, नेनुआं, तोरई, लौकी, बैंगन आदि हल्की और मुलायम सब्जियां लेना शुरू करने के साथ-साथ पेट को खराब करनेवाले जैसे मिठाई, मछली, मांस और तली हुई चीजें कभी नहीं लेनी चाहिये। इस प्रकार रोगी अपने पथ्य को सुधार ने लेके बाद नये या पुराने पेचिश में गिरफ्तार रहते हुये भी फायदा उठा सकता है।

## उल्टी

उल्टी का अर्थ है उल्टा। प्रकृति हमेशा भोजन को पेट से आंत में उतारती है, लेकिन कभी आंत में न उतार कर उल्टे मुँह के रास्ते बाहर कर देती है तो उसे ही उल्टी कहते हैं।

**कारणः—** इच्छा के प्रतिकूल भोजन करना, सड़ा, गला, बासी एवं विषाक्त पदार्थ आहार में लेने से प्रकृति स्वयं आंत में न उतार कर मुँह से ही बाहर कर देती है।

**उपचारः—** उल्टी को कभी तात्कालिक क्रिया द्वारा दबाना नहीं चाहिये। बल्कि उस क्रिया को और भी क्रियान्वित बना देना चाहिये। उल्टी करने का सबसे सरल उपाय है, गुनगुने पानी में थोड़ा नमक मिलाकर पानी अधिक मात्रा में पीकर हाथ की दो बड़ी अँगुलियों को

गले में डालकर खराश पैदा करें तो उल्टी आसानी से हो जाती है और पेट का तमाम विष पानी के साथ बाहर निकल आता है। जिस प्रकार आंत साफ करने के लिये एनिमा रामबाण है उसी प्रकार पाकस्थली साफ करने के लिये उल्टी। लेकिन याद रहे पानी गुनगुना ही होना चाहिये, अधिक गर्म या ठंडा नहीं होना चाहिये। लेकिन जब उल्टी में पानी के सिवा कुछ नहीं निकले और कैका वेग बना रहे तो उसे तुरन्त बन्द करने की चेष्टा करनी चाहिये। उल्टी बन्द करने के लिये अधिक ठंडा पानी या बर्फ का पानी पीना चाहिये, इससे उल्टी तुरंत बन्द हो जाती है। अधिक ठंडे पानी में भिगोया कपड़ा यदि पेट पर रखा जाय तो भी उल्टी बन्द हो जाती है और साथ ही साथ रोगी को आराम भी बहुत मिलता है ठंडा कटिस्नान भी उल्टी बन्द कर देता है। इससे कहा जाता है कि पेट को ठंडा कर देना ही उल्टी बन्द करना है। कभी-कभी सेक से भी आश्चर्यजनक लाभ होता है।

**पथ्य**— रोगीको दिन में दो बार कटिस्नानके साथ ठंडे पानीसे स्नान करना भी अति उत्तम है। रात में मिट्टी की पट्टी पेड़ू पर रखना नहीं भूलना चाहिये। रोगी को जबतक उल्टी आती रहे तबतक नीबू के पानी के सिवा कुछ नहीं देना चाहिये। उल्टी बन्द हो जाने पर, पेट की हालत सुधर जाय तो स्वाभाविक भूख के साथ उसे तरल पथ्य से खाना शुरू करना चाहिये और क्रमशः खाद्य पदार्थ बढ़ाते जाना चाहिये।

## हिचकी

हिचकी अल्पकालिक रोग है। रोगी को एक विशेष प्रकार की बेचैनी रहती है। कभी-कभी यह रोग अधिक समय तक भी रह जाता है, जैसे यह साधारण रोग है उसी प्रकार इसकी सरल चिकित्सा भी है।

**उपचार**— बहुधा रोगी की विचारधारा किसी एक खास विषय पर केन्द्रित होने से या अधिक सोचने विचारने से भी हिचकी बन्द हो

जाती है। ठंडा पानी पीने से भी बन्द हो जाती है। नाक में खराश देकर छींकने, दो चार बार जोर से श्वास खींचकर रोकने से भी बन्द हो जाती है। यदि इन साधारण उपायों से बन्द न हो तो एक रूमाल से पेट को कसकर बांध देने या जीभ को बाहर निकाल कर रूमाल से पकड़े रहने पर भी हिचकी बन्द हो जाती है। उपरोक्त विधि द्वारा यदि फायदा न हो तो रोगी को कटिस्नान, मेहनस्नान, पेट पर मिट्टी की पट्टी रीढ़ पर ठंडी पट्टी लेनी चाहिये।

**पथ्य**— रोगीको अपना भोजन धीरे धीरे खाना चाहिये और हमेशा कम खाकर रहना चाहिये। शराब वगैरह या अन्य नशीली वस्तुओंका सेवन नहीं करना चाहिये।

## पेट से रक्त निकलना

पाकस्थली से खून उठकर मुंह के और नाक के रास्ते बाहर निकल जाता है तो इसे ही पेट से रक्त निकलना कहते हैं। भोजन के साथ कुछ अंश खून का मिला रहता है और रक्त निकलने के पहले पेट में दर्द या उल्टी का उद्वेग वर्त्तमान रहता है। उल्टी के साथ कभी अधिक, कभी थोड़ा खून नाक य मुंह के रास्ते निकल जाता है।

**कारण**— पेट से खून निकलने का कारण है पाकस्थली में घाव या पाकस्थली में कैंसर आदि।

**उपचार**—बीमारीका प्रकोप दिखाई पड़ते ही रोगीको ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि उसकी पाकस्थलीका खून पांव की तरफ प्रवाहित हो कर रोग का वेग कम हो जाय। रोगी को तनिक भी देर के लिये बिना खाट पर चित सो जाना चाहिये। आराम करने के साथ-साथ पेट को खूब ठंडा करने की कोशिश करनी चाहिये। एक तौलिये को ठंडे-पानी में भिगोकर पेट पर रखना लाभप्रद है। रोग का अधिक प्रकोप रहे तो

तौलिये के ऊपर बर्फ की थैली या बर्फ का चूरा रखकर ढक देना चाहिये और सिर को ठंडे पानी से धोकर एक घंटे तक पांव पर पट्टी लगाना आवश्यक है। उपरोक्त क्रिया करने से रोग का वेग कम हो जायगा और आराम मिलेगा।

**पथ्य**–रोगीको बर्फका पानी थोड़ा थोड़ा पीना या बर्फका चूरा चूसना चाहिये। आराम के साथ–साथ उपवास करना अति आवश्यक है। रोग की पहली अवस्था में दो चार दिन तक बर्फ का पानी ही लेना गुणकारी होगा। मलद्वार के रास्ते शहद मिला पानी एनिमा पाट या पिचकारी द्वारा लेकर, दिन में एक बार पेट साफ कर लेना चाहिये। पेट का दर्द बन्द होने के पश्चात् दूध बर्फ के पानी के साथ मिलाकर पीना गुणकारी है अथवा खीरे के रस को लेना चाहिये।

## आँत से रक्त निकलना

मलद्वार के रास्ते जो रक्त निकलता है, उसे ही आंत से रक्त निकलना कहते हैं। प्रायः मल के साथ रक्त मिला रहता है।

**कारण**— बवासीर, आंत का कैंसर, टायफाइड इत्यादि बीमारियों से तथा कभी पेट में अचानक घाव लगने से भी रक्त निकलता है। अधिकाधिक तीव्र औषधियों के सेवन करने से भी खून निकलने लगता है।

इसे साधारण रोग नहीं समझना चाहिये बड़ा ही भयंकर रोग है। प्रायः इस रोग में रोगी कुछ चिकित्सा भी नहीं कर पाता कि तबतक मरणासन्न हो जाता है। इसलिये इस रोग में चिकित्सा शीघ्रातिशीघ्र करनी चाहिये।

**उपचार**— आंतों से खून निकलने का पता लगते ही रोगी को आराम करना चाहिये। जिस प्रकार पेट से खून निकलने पर पेट को ठंडा करके खून बन्द किया जाता है उसी प्रकार आंत को ठंडा करके रक्त बन्द किया जा सकता है। रोगी के पेड़ू पर मिट्टी की पुटलिस रखनी चाहिये। बर्फ के पानी में भीगा हुआ तौलिया पेड़ू पर रखने से आश्चर्यजनक फायदा होता है। परन्तु पट्टी को बदलते रहना चाहिये; क्योंकि पट्टी अधिक देर तक रखने से गर्म हो जायगी और रोगी को लाभ पहुंचाने के बदले नुकसान पहुंचायगी। पिचकारी द्वारा बर्फ का पानी मलद्वार से चढ़ा देने पर भी खून बन्द होता है। बवासीर से यदि खून आता है तो मलद्वार को ठंडा कर देने से बन्द होता है। मलद्वार पर भीगी हुई मिट्टी की पट्टी रखकर आराम से रह सकता है। लेकिन ध्यान रखना चाहिये कि हाथ-पांव ठंडे न होने पायें। रोगी को गर्म पानी में पैर रखकर कटिस्नान लेना, दिन में सिर धोकर भीगे रूमाल से शरीर दिन में दो बार पोंछ लेना चाहिये।

## अपेंडिसाइटिस

हम लोगों की छोटी आंत और बड़ी आंत जहां मिलती है उसी के पास नीचे की तरफ एक छोटी सी आंत की पूंछ रहती है। इसी पूंछ में जब सूजन आ जाती है तो हम उसी को अपेंडिसाइटिस कहते हैं। कभी कम सूजन आती है और स्वयं समाप्त भी हो जाती है। लेकिन यदि कभी अधिक सूजन आती है तो यही आदमी को संकट में डाल देती है।

**लक्षण**— रोग का प्रधान लक्षण, दोनों आंतों के संगम पर पेड़ू के नीचे दाहिनी तरफ जोर का दर्द होता है और इसी जगह गांठ की तरह फूल कर उभार हो जाता है, इस स्थान पर दबाने से रोगी को बहुत दर्द महसूस होता है। दर्द होने पर ठंडी लगकर बुखार भी हो जाया करता है। उल्टी, जी का उद्वेग, श्वास से दुर्गंध आना, जीभ

का मैलापन, कोष्ठबद्धता आदि रोग में लक्षण दिखाई पड़ते हैं। रोगी की आंत की पूंछ में साधारण सूजन होते हुये भी यदि वह अधिक समय तक स्थायी रूप से बनी रही तो आंत की वह पूंछ सड़ जाती है। पहली अवस्था की सूजन तो इलाज होने पर ठीक हो जाती है। यदि चिकित्सा सही ढंग से न हुई तो बार-बार लौट आती है और यही सूजन पुरानी हो जाती है और स्थायी रोग का रूप धारण कर लेती है।

**कारण:**— अधिक दिन से कब्ज से पीड़ित व्यक्ति प्रायः इस रोग के शिकार होते हैं। मांसाहारी व्यक्ति को अक्सर यह रोग होता है क्योंकि मांस से कब्ज होता है, कब्ज से ही यह रोग उत्पन्न होता है और कब्ज ही रोग को बढ़ावा भी देता है।

अक्सर जो मल दोनों आंतों के जोड़ के पास रुका रहता है और सड़ जाता है, उसी की सड़ान से भी सूजन उत्पन्न होती है और यही सूजन बढ़कर आंत तक पहुंच जाती है। शरीर जब नाना प्रकार के विकारों से बोझिल हो जाता है उसका आक्रमण आंत की पूंछ पर ही होता है और सूजन आ जाती है। इसलिये कब्ज को दूर करने के साथ-साथ शरीर को विषैले पदार्थों से रहित करना ही इसकी प्रधान चिकित्सा है।

प्रकृति द्वारा निर्मित हमारे शरीर के जितने भी अंग हैं प्रत्येक का काम कुछ न कुछ अलग-अलग अवश्य है, परन्तु अभीतक इसका पता नहीं चल पाया कि आंत की पूंछ प्रकृति ने क्यों बनायी है, इसका काम क्या है?

**उपचार**— डाक्टरों का कहना है कि शरीर में यह बेकार की चीज है, इसके न रहने पर भी शरीर का कुछ नुकसान नहीं होता। इसीलिये अपेंडिसाइटिस का पता लगने पर आपरेशन से पूंछ काटकर

निकाल देते हैं। अक्सर देखा गया है कि आंत की पूंछ में सूजन न होकर भी आपरेशन कर दिया जाता है, जबकि दोनों आंतों के जोड़ में सूजन रहती है, ऐसी दशा में आपरेशन से लाभ नहीं होता। इसलिये रोगी को थोड़ा बहुत दर्द होने पर आपरेशन नहीं करा लेना चाहिये। यदि प्रकृति के नियमों का पालन किया जाय तो यह रोग आसानी से ठीक हो जाता है।

अन्य रोगों की तरह इस रोग में भी पेट साफ कर लेना आवश्यक है लेकिन स्मरण रखना चाहिये कि एनिमा का पानी अधिक नहीं रहना चाहिये क्योंकि अधिक पानी से पूंछ पर अधिक दबाव पड़ेगा और रोगी को कष्ट अधिक होगा। थोड़े-थोड़े पानी का एनिमा दिन में लगभग तीन चार लेना चाहिये। जब तक रोग की प्रचंडता रहे तब तक उपरोक्त क्रिया का नियमित सेवन करना चाहिये। जुलाब के द्वारा पेट को साफ करने में रोगी का बहुत बड़ा अनिष्ट हो सकता है; इसलिये एनिमा द्वारा ही पेट को साफ करना चाहिये। इससे रोगी का पेट भी साफ हो जाता है और आराम भी मिलता है।

रोगी के दर्द कम करने का, सबसे सरल एवं सुगम उपाय है गर्म ठंडे के सेक लेकर मिट्टी की पुटलिस का पेडू पर प्रयोग। इससे रोगी का दर्द एवं सूजन कम हो जाती है। पानी में भींगे कपड़े की पट्टी को लेना भी आवश्यक है। इस प्रकार उपरोक्त क्रिया को जबतक रोग अच्छा न हो जाय; प्रयोग में लाना चाहिये।

दिन में दो चार पांव की पट्टी लेना अति आवश्यक है। पट्टी खोलने के बाद भीगे रूमाल से शरीर को पोंछ लेना और सिर को टंडे पानी से धो देना चाहिये। बीमारी की शुरूआत से ही यदि उपरोक्त क्रियाओं का विधि पूर्वक अनुसरण किया जाय तो पुराने एवं नये दोनों रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है।

किन्तु आराम हो जाने पर भी इस रोग में चुप-चाप नहीं बैठना चाहिये; क्योंकि ठीक हो जाने पर भी इस रोग का आक्रमण दुबारा हो सकता है, इसलिये रोगी को पेट की लपेट, गीली चादर की लपेट, कटिस्नान, धूप स्नान, भाप स्नान आदि लेकर शरीर को विकार रहित कर लेना अति आवश्यक है।

रोग के लक्षणों पर दृष्टिपात करते हुये कहा जा सकता है कि कुछ न खाकर पहली अवस्था में उपवास ही करना चाहिये। मुंह से पानी भी अक्सर नहीं पीना ही गुणकारी होगा; क्योंकि पानी से पेट में एक प्रकार की लहर पैदा होती है जिससे दर्द अधिक भयावह हो जाता है, इसलिये एनिमा द्वारा पानी पेट में पहुंचाना चाहिये। एनिमा के पानी की मात्रा कम हो और उसमें शहद या नीबू का रस मिला लेना और भी अच्छा होगा। रोग का प्रकोप कुछ कम हो जाने पर रोगी थोड़ा-थोड़ा पानी पी सकता है लेकिन उससे अच्छा नियमित उपवास रखना है जिससे कठिन से कठिन अपेंडिसाइटिस से छुटकारा पाया जाता है।

**पथ्य**— अच्छे हो जाने पर रोगी को फलों का रस लेना चाहिये; और हालत सुधर जाने पर, भात, सब्जियों का सूप लेना भी शुरू करना चाहिये। रोग दूर हो जाने पर भी कब्जकारक पदार्थों से परहेज करना अति आवश्यक है। भोजन को तो रोगी को अवश्य सुधार लेना चाहिये; क्योंकि खान-पान की अनियमितता से ही यह रोग उत्पन्न होता है।

## ( हार्निया ) आंत-उतरना

आंत का अपने स्थान से नीचे उतर जाना ही हार्निया है। इसका प्रकोप प्रायः दो तरह से ज्ञात होता है, एक नाभि के नीचे सूजन या कभी-कभी जांघ के नीचे दिखाई पड़ता है। यह काफी कष्टदायक बीमारी है।

**कारण**— पेट की मांसपेशियां जब कोष्ठबद्धता, अजीर्णता इत्यादि



रोगों से कमजोर होकर अपनी कार्यक्षमता खोकर आंत को अपने निश्चित

स्थान पर हंसने, खांसने, छींकने, दौड़ने इत्यादि कर्मों से बल पड़ने पर नहीं रख पातीं, तो आंत नीचे उतर जाती है।

**उपचार—** प्रायः यह रोग हाथ से दबाने अथवा आराम करने मात्र से ही ठीक हो जाता है क्योंकि दबाव से आंत अपने निश्चित स्थान पर आ जाती है। लेकिन कभी तो यह रोग भयंकर रूप धारण कर रोगी को नाना प्रकार की तकलीफें देता है। आराम करने से ठीक होने के बाद भी पुनः उभर आता है।

आंत उतरने पर लोग आपरेशन करा लेते हैं परन्तु इससे कोई विशेष फायदा नहीं होता क्योंकि जिस कारण से यह रोग उत्पन्न होता है वह तो पेट के अन्दर ही रह जाता है और एक निर्दोष अंग काटकर फेंक दिया जाता है। मांसपेशियों की कमजोरी से तो रोग पैदा होता है। आपरेशन से कमजोर मांसपेशियां तो ज्यों की त्यों रह जाती हैं; उनकी कार्यक्षमता तो बढ़ती नहीं, इसलिये यह चिकित्सा असंगत मानी गई है। कभी कभी तो इसके आपरेशन से प्राणान्त तक भी हो जाता है।

यह रोग पेट साफ रखने एवं मांसपेशियों को सबल बना लेने से ही दूर हो जाता है। इसके लिये गर्म ठंडा सेक लेना और पेट की लपेट एवं मिट्टी की पट्टी प्रयोग में लानी चाहिये। यह क्रिया दिन में कम से कम दो बार करनी अति आवश्यक है।

कमानी को व्यवहार में लाने से भी यह रोग ठीक हो जाता है परन्तु कमानी की अपेक्षा पेट की लपेट और मिट्टी की पट्टी अधिक लाभदायक है क्योंकि लपेट एवं पट्टी से केवल आंत ही अपने निश्चि स्थान पर नहीं आ जाती, बल्कि साथ ही साथ कोष्ठबद्धता एवं अजीर्ण भी दूर हो जाता है, जोकि रोग उत्पन्न करने का कारण बनते हैं। क्योंकि कारण से कार्य होता है यदि कारण ही नहीं रहेगा तो कार्य का होना असम्भव है।

यदि आंत जांघ के नीचे उतर आयी हो तो उपरोक्त गर्म-ठंडा सेंक लें, और पेट की लपेट के स्थान पर जांघ के नीचे के स्थान पर पानी की पट्टी लेकर ऊपर से फलालिन से बांध देना चाहिये।

**पथ्य**—पेटकी मांसपेशियोंको सबल बनानेके लिये भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, मयूरासन आदि जैसे आसनों एवं व्यायामोंका प्रयोग करना चाहिये, जिनसे मांसपेशियों पर बल पड़े और वे ताकतवर हों। इससे फिर हार्निया होने का भय नहीं रह जाता। फलाहार एवं रसाहार पर ही कुछ दिन तक रहना चाहिये, जिससे कोष्ठबद्धता पुनः न हो, क्योंकि स्वास्थ्य कायम रखने के लिये कोष्ठ को साफ रखना आवश्यक है।

## गुदा मार्ग का बाहर आना

गुदा मार्ग का बाहर आना एक साधारण रोग है। यह रोग अक्सर बच्चों को ही होता है यदि इसकी सही ढंग से चिकित्सा नहीं हुई तो बड़ी उम्र तक भी रह जाता है।

**कारणः**— अन्य रोगों की तरह यह भी कोष्ठबद्धता से ही उत्पन्न होता है। अधिक समय तक कोष्ठबद्धता कायम रहने पर रोगी को शौच के समय अधिक जोर देना पड़ता है, जिससे गुदामार्ग बाहर आ जाता है। इसके अतिरिक्त अजीर्ण एवं आंव रोग से अधिक कमजोरी आ जाने पर भी होता है। इसलिये जिन कारणों से रोग उत्पन्न होता है उन्हीं को दूर कर लेना चाहिये।

**उपचार**— गुदा मार्ग बाहर आ जाने पर तत्काल अन्दर करने की चेष्टा करनी चाहिये। हाथ में नारियल का तेल लगाकर दबाना चाहिये। कभी-कभी तो स्वयं बिना कोई उपाय किये ही भीतर की ओर प्रवेश कर जाता है। यदि उपरोक्त क्रिया से लाभ न हो तो उसके ऊपर खूब ठंडे पानी में भीगे कपड़े की मोटी पट्टी रखनी चाहिये।

या थोड़े पानी में बैठकर कटिस्नान लेना चाहिये। परन्तु पानी अधिक ठंडा होना चाहिये। बर्फ का पानी रहे तो अति उत्तम होगा।

गुदा मार्ग भीतर कर लेने मात्र से ही रोग अच्छा नहीं हो जाता। इसलिये गुदामार्ग की चिकित्सा के साथ-साथ शरीर को भी मजबूत एवं गठित कर लेना चाहिये। गुदा मार्ग पर तीन मिनट का गर्म ठंडा सेक लेकर ढकी हुई मिट्टी की पट्टी या कपड़े की ढकी हुई पट्टी का प्रयोग करना गुणकारी है। साथ ही साथ पेट को भी साफ़ रखना चाहिये। पेट पर गर्म ठंडा सेक लेना, लीवर की मालिश, पेट की लपेट, पेडू पर मिट्टी की पट्टी, पेट साफ रखने के लिये आवश्यक है। रोगी को धूप-स्नान लेकर प्रतिदिन ठंडे पानी से स्नान करना चाहिये। उपरोक्त क्रियायें इस रोग में राम-बाण हैं।

**पथ्य**—रोगी का भोजन ऐसा होना चाहिये जिससे कोष्ठबद्धता और अजीर्णता कभी न हो। पेट दिन में दो बार नियमित साफ हो जाया करे और मल त्याग के समय जोर लगाने की आवश्यकता न पड़े।

## चूना या केंचुआ रोग

चूना रोग भी प्रायः बच्चों को ही हुआ करता है। लेकिन कभी-कभी इसका प्रकोप बड़े लोगों में भी दिखाई पड़ता है। जिन लोगों की आंत गंदी रहती है, उनके मल के साथ कभी-कभी कीड़े दिखाई पड़ते हैं, जिन्हें चूना कहते हैं। ये कीड़े कई प्रकार के होते हैं। अधिकतर तो छोटे-छोटे सफेद रंग के होते हैं और दूसरे बरसाती कीड़े, जोकि मिट्टी में रहनेवाले हैं, लम्बे और मटमैले रंग के होते हैं। इनकी लम्बाई लगभग एक बालिश्त तक की होती है।

इसके नाम के अर्थ के साथ बहुत कुछ रोग-लक्षण भी मिलता है। आंत के कीड़े जब गुदाद्वार पर पहुंचते हैं तो वहां बड़ी खाज पैदा होती

है। इससे रोगी को बड़ी तकलीफ होती है। चूने के रोगी के मल में देखने से कीड़े चलते-फिरते नजर आते हैं। इस तरह रोगी जब तक ठीक नहीं हो जाता उसके मल में अधिक संख्या में कीड़े मिलते हैं। सफेद रंग के कीड़े तो झुण्ड के झुण्ड पाये जाते हैं लेकिन बड़े कीड़े चार छः ही मिलते हैं।

**कारण व लक्षण**—सुषुप्तावस्थामें दांत घिसना, नाक खुजलाना, नींद न आना, चिड़चिड़ा स्वभाव, अतिसार आदि रोग लक्षण दिखाई पड़ते हैं। कभी-कभी पेट दर्द की भी शिकायत होती है। चूना रोग पेट की गन्दगी के कारण होता है क्योंकि कीड़े गन्दगी से ही पैदा होते हैं। साफ सुथरे स्थान पर कीड़े स्वयं ही मर जाते हैं। इसलिये कीड़े पैदा होने की जगह बड़ी आंत को साफ रखना ही इसका प्रधान इलाज है। फिर कीड़े मारनेवाली दवा का सेवन करना अनावश्यक हो जाता है।

**उपचार**— रोगी को गर्म ठंडा सेक लेकर शहद या नीबू का रस मिले हुये पानी का एनिमा लेना आवश्यक है। एनिमा से पेट भी साफ होता है और कीड़े भी निकल आते हैं। शहद और नीबू का रस पानी में मिलाकर एनिमा लेना इसलिये लाभदायक है कि शहद के मिष्ठान्न खाने की लालच से कीड़े आंत के बाहर एनिमा के पानी में निकल आते हैं फिर एनिमा के पानी के साथ बाहर निकल जाते हैं, दूसरे नीबू की खटास को सहन न कर पाने से आंत छोड़कर हमेशा के लिये चले जाते हैं। पेट की लपेट से भी काफी लाभ होता है। मिट्टी की पट्टी, कपड़े की पट्टी पेड़ू पर लेना लाभदायक है।

**पथ्य**—रोगीको जिस तरह भीतरी सफाई आवश्यक है उसी तरह बाहरी सफाई भी आवश्यक है। रोगी को कपड़े धोकर धूप में सुखाने चाहियें। धूप स्नान लेकर ठंडे पानी से खूब रगड़-रगड़ कर स्नान

करना चाहिये। रोगी का भोजन हमेशा शुद्ध, ताजा एवं अच्छी किस्म का होना आवश्यक है। भोजन में अधिकतर खट्टे फल जैसे संतरा, जामुन, नींबू आदि लेना ही ठीक है। अच्छा तो यह होगा कि नीबू के रस को लेकर दो तीन दिन का उपवास किया जाय। उपवास के बाद संतरा, टमाटर, दही आदि खट्टे पदार्थ खाकर रहना चाहिये। क्योंकि कुछ दिन इस प्रकार के खाद्य पर रहने से रोग सदैव के लिये नष्ट हो जाता है।

---

**हलका भोजन, शुद्ध जल, ताजी हवा, समुचित परिश्रम और यथेष्ट शयन से मनुष्य औषधियों की अपेक्षा कहीं अधिक निरामय हो सकता है।**

÷ ÷ ÷

**स्वस्थ रहना है तो खाने को आधा, पीने को दूना, करने को तीगुना और हँसने को चार गुना करो।**

# तृतीय अध्याय

## पेट के जीर्ण रोग

### कब्ज

कब्ज का मतलब है, मल के निष्कासन में विलम्ब होना, सूखकर कड़ा हो जाना, कष्टप्रद हो जाना, समय पर न निकलना, मुश्किल से निकलना, गांठें पड़ जाना, शौच में अधिक समय लगना आदि ।

**कारण**— खाद्य पदार्थ का कुछ भाग नाना प्रकार के रूप में परिवर्तित होकर हमारे शरीर की गठन में काम आता है और कुछ निकृष्ट तत्व मल के रूप में बाहर निकल जाता है। हमारा भोजन लगभग १२ से १८ घंटे तक आंत में रहता है। उपरोक्त समय से अधिक समय तक भोजन आंत में यदि रहता है तो वही अन्दर ही अन्दर सड़ता है और उसकी सड़ान से विष उत्पन्न होता है, और वही विष हमारे सारे शरीर में फैलकर नाना प्रकार की बीमारियों को जन्म देता है, क्योंकि आंतों का काम है रस चूसना। यदि समय पर मल आंत से बाहर निकल जाता है तो उपरोक्त परिस्थिति उत्पन्न ही न होगी और विष बनेगा ही नहीं। इसलिये कहा जाता है कि कब्ज ही सब रोगों का जन्मदाता है।

**उपचार**— स्वास्थ्य को स्थिर रखने के लिये रेचक औषधियों का प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि इन औषधियों से कोष्ठबद्धता जाने के बदले स्थिर हो जाती है। रेचक औषधियों की प्रतिक्रिया आंत में उसी प्रकार होती है जैसे आंख में मिर्च की। रेचक औषधि के आंत में



पड़ते ही पानी निकलना शुरू हो जाता है और उसी पानी के बहाव से

एक-दो बार पतला दस्त हो जाता है और लोग समझते हैं कि पेट साफ हो गया, परन्तु यह भूल है। बार-बार रेचक औषधियों के प्रयोग से आंतों का स्वाभाविक पाचक रस छोड़ने का गुण समाप्त हो जाता है और फिर वे पाचक रस नहीं बना पातीं। इससे धीरे-धीरे पुराना कब्ज होता जाता है। इसलिये आंतों को उत्तेजित करने के लिये रेचक औषधि का प्रयोग स्वास्थ्य इच्छुक के लिये निषिद्ध है।

प्राकृतिक-चिकित्सा विधि में बिना कुछ औषधि लिये ही पेट को हमेशा साफ किया जा सकता है। पेडू पर गीली आध इंच मोटी मिट्टी की पट्टी, रात को पेट की लपेट कोष्ठ साफ रखने के लिये सरल एवं सुगम उपाय है। इस क्रिया से सबल एवं निर्बल दोनों प्रकार के रोगी अनुकूल लाभ उठा सकते हैं। उपरोक्त विधियों में एक घंटे से क्रमशः बढ़ाकर पूरी रात तक का प्रयोग कर सकते हैं। पेट साफ करने के लिये कटि-स्नान बड़ा ही लाभकारी प्रयोग है। पेट के गर्म होने की दशा में ही कटिस्नान लेना चाहिये अन्यथा नहीं। पेट की मालिश से भी काफी लाभ होता है। मालिश करने की विधि इस प्रकार होनी चाहिये। हाथ को कटोरी का रूप देकर नाभि को केन्द्र मानकर अर्धचन्द्राकार दाहिनी से बायीं तरफ को पेट का घर्षण करना चाहिये। परन्तु ऐसी दशा में पांव को घुटने से मोड़कर रखना चाहिये।

आसन और व्यायाम से भी कोष्ठ शुद्धि में काफी सहायता मिलती है। भुजंगासन, शलभासन, सर्वांगासन धनुरासन, हलासन, मयूरासन आदि आसनों तथा उड्डीयान और नौलीकर्म से पेट का व्यायाम अच्छी प्रकार से होता है। अतः इनको लेना अति आवश्यक है। सुबह-शाम ठंडी हवा में घूमने से भी पेट अच्छी तरह साफ होता है। इसके द्वारा पेट के व्यायाम के अतिरिक्त स्नायुविक शक्ति मिलती है। जिसके द्वारा शरीर अपना कार्य सही ढंग से करने लगता है।

इसके उपरान्त जिन कारणों से कब्ज होता है, उन पर भी विशेष ध्यान देना चाहिये। प्रायः मल के वेग को रोकने से भी कब्ज होता है। इसलिये हाजत को कभी नहीं रोकना चाहिये। हाजत के शौच और विन हाजत के शौच में उतना ही अन्तर है जितना भूख और विना भूख के खाने में।

देहात की अपेक्षा शहरी-जीवन बितानेवालों में अक्सर कब्ज का रोग पाया जाता है। इसका कारण है शारीरिक परिश्रम न करना। कब्ज दूर करने के लिये शारीरिक परिश्रम करना नितान्त आवश्यक है। शहर के लोगों को अपने दिन भर के कार्य-कारिणी—समय-सारिणी में खेल-कूद का भी स्थान रखना जीवन रक्षा के लिये महत्त्वपूर्ण है। ग्रामीण जीवन बितानेवालों का स्वभावतः अपने जीविकोपार्जन में ही शारीरिक परिश्रम हो जाया करता है, जिससे उन्हें कभी कब्ज की शिकायत होती ही नहीं।

पानी कम पीने से भी कब्ज होता है। जो लोग अपनी प्यास चाय, सोडा, लेमन इत्यादि पेय पदार्थों से बुझाते हैं उन्हें अक्सर यह रोग उत्पन्न होता है। स्वस्थ रहने के लिये दिनभर में कम से कम प्रत्येक व्यक्ति को तीन सेर पानी पीना अति आवश्यक है। पानी पीने का सर्वश्रेष्ठ समय सुबह सोकर उठने के तत्काल बाद ही एक गिलास पानी में नीबू का रस डालकर पीना है। इससे मल का वेग जोर देकर आगे बढ़ता है और शौच खुलकर साफ होता है। भोजन करने के एक घंटे पहले या एक घंटे बाद में पानी पीना अति उत्तम है। खाने के समय पानी नहीं पीना चाहिये, क्योंकि पाचन क्रिया में बाधा होती है। पानी एक बार में ही अधिक नहीं पीना चाहिये, बल्कि थोड़ा-थोड़ा करके कई बार में पीना चाहिये।

अक्सर लोग काम की अधिकता से या अन्य किसी कारणवश



शीघ्रता से बिना चबाये ही भोजन के ग्रास को निगल जाते हैं, जिससे

पचने में अधिक समय लगाता है । भोजन प्रसन्न-चित्त, शान्तिपूर्वक, मन के तमाम विकारों से रहित एकान्त स्थान में करना चाहिये । चिन्तित अवस्था में भोजन करने पर हमारे पाचक तंत्र से पाचन रस नहीं निकल पाते। भोजन को नियमित, शुद्धता और निश्चित समय पर करना चाहिये। भोजन शुद्ध, ताजा एवं सुपाच्य हो, धूम्रपान की आदत हो तो छोड़ देनी चाहिये । भोजन का क्रम नहीं बिगाड़ना चाहिये। जो लोग अपने भोजन में घंटे दो घंटे का हेरफेर कर देते हैं उनका शौच का भी समय बदल जाता है और धीरे-धीरे कब्ज का रूप धारण कर लेता है।

जिस प्रकार खाने का समय निश्चित रखा जाय उसी प्रकार सोने का भी समय निश्चित रखना आवश्यक है । यदि रात में देर से सोये और सुबह देर से उठे तब भी शौच के समय में हेर-फेर हो जाता है। खाना खाने के लगभग तीन घंटे बाद सोना चाहिये । खाना खा के तुरन्त न सोयें, क्योकि भोजन पाकस्थली में ही पड़ा रह जाता है। निद्रावस्था में पाचन क्रिया शिथिल हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम आठ घंटे सोना आवश्यक है। इसलिये समझदार व्यक्ति को रात में कभी सिनेमा इत्यादि नहीं देखना चाहिये क्योकि उससे नियमित जीवन में बाधा उत्पन्न होती है।

शौच में भी शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। अधिकांश लोग शहरों में संडास की गंदगी से बचने के लिये शीघ्रता करते हैं, जिससे पेट साफ नहीं होता, इसलिये उनको चाहिये कि संडास को साफ रखें और पूर्ण मलविसर्जन करके ही उठें।

यदि पुराने कब्ज की शिकायत से समस्त शरीर विषैला हो गया हो तो गीली चादर की लपेट और भाप स्नान बीच-बीच में लेकर शरीर को शुद्ध कर लेना चाहिये। कभी-कभी एनिमा द्वारा पेट साफ कर

लेने के बाद एक घंटे की गीली चादर की लपेट लेने से चमत्कारिक प्रभाव पड़ता है। कभी यदि ऐसी परिस्थिति आ जाय कि पेट शीघ्र साफ़ करना चाहिये तो उस अवस्था में बिना कुछ सोचे समझे पेट पर गर्म ठंडा सेक लेकर एक नीबू के रस के गुनगुने पानी का एनिमा ले लेना चाहिये। इससे पेट शीघ्र साफ हो जाता है।

पथ्य—उपरोक्त क्रियाओं के अतिरिक्त यदि भोजनमें सुधार कर लिया जाय तो पेट साफ करने की चिन्ता ही नहीं रहती। खाद्य में काफी मात्रा में फल, तरकारी, सलाद लेने से पेट अच्छी तरह साफ होता है। बेल, अमरूद, टमाटर, पपीता, सेब, किशमिस, खजूर, खुमानी, अंजीर इत्यादि फल और पालक, लौकी इत्यादि सब्जियां पेट साफ रखने में सहायक हैं। बहुत बार बी. विटामिन की कमी से भी कब्ज हो जाता है, इसलिये बी. विटामिन युक्त खाद्य लेना अति आवश्यक है। यह गेहूँ के अंकुर, सभी दालों, कच्ची मटर, मूंगफली, दूध, चोकर समेत आटा, लाल हाथ का कूटा हुआ चावल इत्यादि पदार्थों में पाया जाता है। काजू, अखरोट, बादाम, सूखे फलों में भी अधिक होता है।

ध्यान रहें कि हमारे भोजन में अधिक मात्रा में फुजला रहने पर कभी कब्ज नहीं होता। मैंदे से बनी हुई तली भूनी वस्तुओं से परहेज रखना चाहिये।

आधा छटांक किसमिस, पांच मुनक्के एक अंजीर शाम को पानी में भिगोकर सुबह उन्हें मसल कर पानी पी जाने से कब्ज में लाभ होता है या शाम को दो चम्मच इसबगोल की भूसी फाँककर शहद का रस पी लेने से पेट अच्छी तरह साफ हो जाता है।

## अजीर्ण (बदहजमी)

संसार के सभी प्रमुख रोगों में अजीर्ण का स्थान आता है। वायुफुल्लता, खट्टी डकार, गले की जलन, दस्त, कब्जियत, पाकस्थली

का भारीपन इत्यादि लक्षण इस रोग में दृष्टिपात होते हैं। वर्तमान युग में अजीर्ण को रोगों की पंक्ति में न रखकर बल्कि दूसरे रोगों के लक्षण मात्र माना जाता है। लेकिन यह पूर्णरूपेण न्यायसंगत नहीं।

**कारण**— विशेष रूप से असमय का भोजन, ज्यादा खाना, जल्दी-जल्दी खाना, भोजन करने के बाद शीघ्र परिश्रम करना इत्यादि नियमोल्लंघन से अजीर्ण रोग होता है। जब भोजन अच्छी तरह से नहीं पचता तो शरीर में अमृत बनने के बदले जहर बनता है, जो कि शरीर के रक्त संस्थान को दूषित कर देता है और रक्त दूषित होकर पाकस्थली पर ही आक्रमण करता है। इससे नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। जैसे गठिया, वात, मधुमेह आदि, इनके कारण शरीर का विष रक्त में आ जाता है तभी अजीर्ण की भी शिकायत होती है।

**उपचार**— इसलिये अजीर्ण रोग का मात्र इलाज करना मूर्खता होगी। खान-पान सुधार लेना अति आवश्यक है। स्वास्थ्य संबंधी नियमों का उल्लंघन कभी भी नहीं करना चाहिये। उनका उल्लंघन करके दवा-दारू के सहारे अजीर्ण कभी भी स्थाई रूप से शरीर से विदा नहीं किया जा सकता। इसके लिये समस्त शरीर को दोषमुक्त करना तथा आंतों को सबल बनाना ही सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा है।

सर्व प्रथम रोगी के पेट पर गर्म ठंडा सेक देकर गुनगुने पानी का एनिमा देकर पेट साफ कर लेना चाहिये। पेट की लपेट, कटिस्नान, पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी आदि कुछ दिन तक लेकर पेट हमेशा के लिये साफ कर लेना चाहिये। इस रोग में पेट की लपेट से बहुत लाभ होता है, लेकिन पेट की लपेट पहले दिन एक घंटे से शुरू करके क्रमशः बढ़ाकर पूरी रात तक लेनी चाहिये।

अजीर्ण रोगी का चर्म प्रायः रक्त-शून्य रहता है और शरीर ठंडा रहता है जिससे शरीर से कभी पसीना नहीं निकलता, पसीने के साथ

शरीर की गंदगी जो बाहर निकलती है, वह नहीं निकल पाती। रोगी को चाहिये कि स्नान करनें के पहले धूप स्नान या थोड़ी देर के लिये भाप स्नान लेकर देह गर्म कर ले। स्नान करने के बाद भी सूखा मालिश पूरे शरीर पर करके उसे गर्म कर लेना चाहिये।

इसके अतिरिक्त रोगी को व्यायाम भी अति आवश्यक है। व्यायाम में पेट के व्यायाम का विशेष स्थान रहना चाहिये, यौगिक आसन भुजंगासन, धनुरासन, हलासन, मयूरासन आदि आसन तथा नौलीकर्म और उड्डीयानबंध भी जरूरी हैं। आसन और व्यायाम से शरीर का प्रत्येक अंग अपनी कार्य-क्षमता को पाकर अपना-अपना कार्य आसानी से करने लग जायेगा।

पेट और लिवर की मालीश भी अजीर्ण रोग में लाभकारी प्रयोग सिद्ध हुआ है। इसके अलावा रोगी को कभी-कभी पूरे समय का भाप स्नान लेकर पसीना निकाल लेना चाहिये। इससे शरीर का अधिक मात्रा में विष बाहर आ जाता है और शरीर अन्दर से साफ हो जाता है।

रोगी को पानी के साथ दो नीबू का रस रोग रहने तक नित्य पीना चाहिये, इससे भी शरीर का विष पेशाब के साथ बाहर निकल जाता है। नीबू से दूसरा फायदा यह है कि खट्टा फल होने पर भी हजम होने के बाद क्षार-युक्त पदार्थ में बदल जाता है और अम्ल विष का नाश ही कर डालता है।

पथ्य—रोगी को नीबू का रस ले-लेकर कई दिनों का उपवास कर लेना चाहिये, इससे शरीर का एकत्रित विष जलकर राख हो जायगा। साथ ही पाचन शक्ति में भी वृद्धि होगी, तथा भोजन से रस खींचने की ताकत बढ़ जायगी। उपवास सभी पेट के रोगियों के लिये हितकर है। ... उपवास एक दिन का ... बढ़ाना चाहिये जब रोगी को

स्वाभाविक भूख लगे, तब उसे मट्ठा, नारियल का पानी, दही आदि से क्षुधा तृप्ति करनी चाहिये। अधिक मात्रा में दही, मट्ठा लेने से जीवन रक्षक कीटाणुओं का प्रादुर्भाव होता है और हानिकारक कीटाणुओं का नाश।

पेट का रोग अच्छा हो जाने पर फल, फल का रस, सब्जियों आदि पर विशेष जोर देना उत्तम है। रोगी का भोजन उत्तेजक न होकर क्षारयुक्त और सुपाच्य हो। रोगी भोजन खूब चबाकर करे, प्रसन्न चित्त रहे, थोड़ी भूख रखकर ही भोजन छोड़ दे, समय पर भोजन करे, इत्यादि।

## अम्ल रोग

हमारे शरीर के रक्त में अम्ल और क्षार का अनुपात क्रमशः २० व ८० का है। प्राकृतिक चिकित्सकों के मतानुसार अनुपात में अन्तर पड़ने पर ही रोग होता है। प्रकृति हमेशा इस अनुपात को समान रखने की चेष्टा करती है। रक्त का अम्ल बढ़कर जब २० से अधिक हो जाता है, तब प्रकृति उसे पाकस्थली के रास्ते निकाल कर, अम्ल-क्षार के अनुपात को बराबर करने की चेष्टा करती है। इसे अम्ल रोग कहते हैं।

**कारण—** कभी-कभी पुरानी कोष्ठबद्धता के कारण शरीर जब विषैला हो जाता है, तब शरीर की शुद्धता के लिये प्रकृति पाकस्थली की राह अपनाती है। बहुत बार शारीरिक पाचक रस खराब होकर भोजन को ही खराब कर सड़ा डालते हैं। जिससे आहार का अमृत बनने के बदले विष बनता है, प्रकृति इस विष को शरीर में दग्ध न करके मुह के रास्ते बाहर निकाल देने की चेष्टा करती है, तभी अम्ल रोग होता है।

यह बड़ा ही कष्टदायक रोग है, मीठा दर्द देकर मारता है। अम्ल के रोगी को कुछ अधिक मात्रा में भूख भी लगती है और वह अधिक खाता भी है। खाना खाने के बाद कुछ समय तक उसे आराम प्रतीत

होता है परन्तु घंटे दो घंटे के बाद पेट में भारीपन महसूस होता है। इस पर विशेष ध्यान न देकर यदि चिकित्सा न की गई तो कुछ समय के बाद पुराने रोग में परिवर्तित हो जाता है और छाती के बीचों बीच जलन होने लगती है। अम्लरोग में दूषित पाचक रस बहुत तेजी से निकलता है और छाती से होकर गले तक पहुँच जाता है, गला जलना भी शुरू हो जाता है। कभी-कभी उल्टी भी हो जाती है परन्तु उल्टी में जो कुछ निकलता है बड़ा ही खट्टा प्रतीत होता है। अधिक दिन तक यही अवस्था रहने पर दांत प्रायः नष्ट हो जाते हैं और पाकस्थली में घाव भी उत्पन्न होता है। यह रोग पाकस्थली का नहीं पूरे शरीर का है। इसलिये पाकस्थली को सबल बनाने के साथ-साथ पूरे शरीर को विषमुक्त कर लेना प्रधान चिकित्सा है।

**उपचार—** कुछ दिन तक पेट पर गर्म ठंडा सेक लेकर सोडे मिले पानी के एनिमा लेने से बड़ी आंत के रास्ते अम्ल रस बाहर निकल जाता है, और पाकस्थली का अम्लत्व, गले की जलन अपने आप बन्द हो जाती है। बहुत से लोग अम्लत्व नष्ट करने के लिये सोडावाटर का प्रयोग करते हैं परन्तु उससे स्थाई लाभ नहीं होता। कुछ समय बाद पुनः वही शिकायत शुरू हो जाती है क्योंकि सोडा पाकस्थली को और अधिक अम्ल पैदा करने के लिये उत्तेजित करता है। सोडा अम्ल को नष्ट करने के बदले और अधिक पैदा करता है।

इस रोग में बार-बार पेट की लपेट लेने से काफी लाभ होता है। जब कभी कभी रोगी को भोजन करने के आधा घंटे बाद तकलीफ और दर्द का अनुभव होता हो तो पेट की लपेट लेकर आधे घंटे तक ऊपर से गर्म थैली द्वारा सेकें और लपेट दो घंटे तक रखने से काफी लाभ होगा। ऐसा करने से भोजन करने के बाद जो उल्टी होती है, वह बन्द हो जाती है।

रोगी को भाप-स्नान से भी बहुत लाभ होता है। पैर का गर्म-स्नान देने से पाकस्थली के रक्त का दबाव पैर की तरफ हो जाता है और पाकस्थली हल्की हो जाती है। भापस्नान और गीली चादर की पैक से अमलत्व बहुत मात्रा में त्वचा द्वार से बाहर निकल जाता है। इसके लिये सप्ताह में एक बार भापस्नान या गीली चादर की पैक द्वारा पसीना निकाल लेना अति आवश्यक है। प्रतिदिन स्नान करने के पहले चार पांच मिनट का धूप स्नान या भापस्नान लेना आवश्यक है। स्नान करने के बाद भी सूखी मालिश करके शरीर गर्म करना चाहिये। दिन में दो बार स्नान करना चाहिये। रोगी को यदि हिचकी की शिकायत हो तो वह भी उपरोक्त क्रिया से बन्द हो जाती है। रक्त को सम्पूर्ण शरीर में फैलाने के लिये सोने से पहले गीले तौलिये से पूरे शरीर को पोंछ देना चाहिये इससे नींद भी गाढ़ी आती है।

दुर्बल रोगी खुली हवा में सुबह टहल कर व्यायाम का लाभ उठा सकता है। सबल रोगी को खुली हवा में आसन या व्यायाम करना आवश्यक है। प्रातःकाल उठने पर एक गिलास गर्म पानी में नीबू का रस डालकर पीना चाहिये। भोजन करने के आधे घंटे पहले या आधे घंटे बाद में थोड़ा गर्म पानी पीने से पाकस्थली में अम्ल का बनना बन्द हो जाता है। इतने से पेशाब भी साफ होने लग जाता है, परन्तु रोग में सुधार होने पर ठंडे पानी पर आ जाना चाहिये।

**पथ्य** - रोगी का पथ्य हमेशा ताजे व सूखे फल, तरकारी, तरकारी का सूप, फल का रस, मधु और ताजा दूध ही रहना चाहिये। खीरे का रस इस रोग में राम-बाण है। एक सप्ताह तक खीरे के रस पर उपवास रख लेने से रोग बहुत ही शीघ्र रोगी को छोड़ देता है। मौसम्बी, सरीफा, खूब पका केला, अखरोट, खुमानी आदि मीठे फल रोगी के लिये लाभकारी हैं। ज्यों-ज्यों रोग में सुधार होता जाय त्यों-त्यों खट्टे फलों की



मात्रा बढ़ाते जाना चाहिये। रोग की तीव्र अवस्था में नीबू वगैरह खट्टे

फल लेने से अम्लत्व बढ़ जाता है, इसलिये जबतक रोग का प्रकोप रहे तबतक खट्टे फलों से रोगी को परहेज करना चाहिये। रोग घटते ही धीरे धीरे नीबू का रस लेना शुरू करना चाहिये; उसको लेने का अच्छा समय है प्रातःकाल जबकि पाकस्थली अम्लरस से खाली रहती है। क्षार प्रधान खाद्य होने से नीबू इस रोग में बड़ा ही गुणकारी है।

पालक को छोड़कर सभी हरी सब्जियां उबाल कर बिना मसाले के खाना लाभदायक है, क्योंकि मसाले बहुधा अम्लकारक ही हुआ करते हैं। प्याज, लहसुन, सरसों, चाय, काफी, कोको, मांस, सभी दालें, चीनी, कचौड़ी, पकौड़ी आदि अम्ल रस बढ़ानेवाले खाद्य न लेने चाहियें।

खाने का समय नियमित होना आवश्यक है। कम खाना भी ठीक ही होगा। भर पेट कभी नहीं खाना चाहिये। बहुत गर्म और बासी खाना भी हानिकारक है। ओलिव आइल एक चम्मच खाने के पहले लेने से बहुत लाभ होता है, यह भी एक क्षार-प्रधान और पौष्टिक पदार्थ है। रोगी को नारियल का तेल, सरसों के बदले में प्रयोग करना उत्तम होगा। नारियल का गूदा भी हितकर है।

## क्षत-रोग (अलसर)

हमारे शरीर में जिस तरह बाहर घाव हो जाता है उसी प्रकार आन्तरिक भाग में भी घाव हो जाता है। जब कभी पाक स्थली की दीवाल में घाव हो जाता है तो उसे पाकस्थली का अलसर कहते हैं और जब छोटी आंत के ऊपरी भाग में होता है तो उसे आंत का अलसर कहा जाता है।

**लक्षण**— पाकस्थली के अलसर में नाभि के थोड़ा ऊपर छाती की हड्डियां जहां खत्म होती है वहां दर्द होता है। कभी-कभी पीठ के

बीचों बीच दर्द मालूम पड़ता है। प्रायः यह दर्द भोजन के पहले रहता है और बाद में कुछ समय के लिये बन्द हो जाता है। खाना खाने के पहले दर्द का कारण है पाकस्थली खाली रहती है और सदा बननेवाला अम्ल रस सीधे घाव पर ही पड़ता है। पेट पर दबाव पड़ने पर अधिक पीड़ा महसूस होती है यहां तक कि रोगी कपड़े भी कसकर नहीं पहन सकता। दर्द के साथ प्रायः उल्टी भी हो जाया करती हैं। कभी कभी उल्टी में खून भी आ जाता है और रोगी सदैव कब्ज से पीड़ित रहता है।

छोटी आंत के अलसर में पंजरे के नीचे ही दर्द होता है, और रोग पुराना हो जाने पर मल के साथ भी खून आने लगता है। अम्ल रोग का अधिक दिनों तक शिकार बने रहने पर यह रोग भी उत्पन्न हो जाता है।

**कारण**— जो लोग बहुत गर्म या बहुत ठंडा खाना खाते हैं या चाय, काफी, शराब इत्यादि का सेवन करते हैं साधारणतया वे लोग ही इस रोग की गिरफ्तारी में आते हैं। इस रोग के उत्पन्न होने का कुछ भी कारण हो, बिना शरीर के दूषित, या पाकस्थली की झिल्ली दुर्बल हुये; यह रोग कभी नहीं हो सकता। इसलिये पाकस्थली को सबल बनाने के साथ साथ समस्त शरीर को विकार रहित कर लेना आवश्यक है।

**उपचार**— रोग की तीव्र अवस्था में पेट हमेशा साफ रहे; इसका विशेष ध्यान रखना चाहिये। परन्तु इसके लिये कभी जुलाब की दवा का सेवन नहीं करना चाहिये। एक चम्मच सोडा गुनगुने पानी में मिलाकर एनिमा लेने से पेट साफ हो जाता है। सोडा पानी में रोग की तीव्र अवस्था में ही मिलाना चाहिये। पेट की लपेट पर विशेष जोर देना चाहिये। इस क्रिया से भी पेट बराबर साफ हुआ करता है। दर्द को कम करने के लिये पाकस्थली के ऊपर दिन में तीन बार गर्म ठंडा सेक लेना आवश्यक है। दर्द कम करने की सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा यही है।

पांव की पट्टी लेने से पाकस्थली के विकारों का प्रवाह पांव की ओर मुड़ जाता है और घाव जल्दी ही सूख जाता है। गर्म ठंडा सेक लेने के बाद ही पेट की लपेट लेनी चाहिये। पट्टी बदलनी भी चाहिये और इससे दर्द, उल्टी आदि लक्षण समाप्त हो जाते हैं। प्रबल उल्टी के वेग को रोकने के लिये रोगी बर्फ चूसे और बिस्तर पर आराम से पड़ा रहे, इससे घाव भी भर जाता है, तथा आराम भी मिलता है। अतः विश्राम आवश्यक है।

पेट की लपेट, पेडू की पट्टी, गर्म ठंडा सेक, धूप स्नान, भापस्नान इत्यादि प्राकृतिक-चिकित्सा की विधियों से शरीर को विकार रहित करना चाहिये। कोष्ठ की सफाई का सदैव ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि पुनः रोग होने का डर रहता है।

आराम हो जाने पर रोगी को व्यायाम भी करना चाहिये। श्वासन करना आवश्यक है। हमेशा सुख शान्ति और आनन्द से रहना चाहिये। क्रोध, चिन्ता उद्वेग एवं गन्दे विचार कभी भी मन में नहीं लाने चाहियें।

**पथ्य**—रोगी को तीव्र अवस्था में दूध और खीरे के रस के सिवा कुछ नहीं लेना चाहिये। यदि रोगी खीरे के रस से एक हफ्ते तक उपवास करके रहे तो घाव जल्दी ही अच्छा हो जाता है। परन्तु रस थोड़ा-थोड़ा लेना चाहिये। बार-बार थोड़ा लेने का अभिप्राय यह है कि घाव पर अम्ल रस न पड़ने पाये और जल्दी ही सूख जाये। खीरे के रस के बदले रोगी को दूध का भी सेवन करना चाहिये। परन्तु दूध ताजा हो या एक उबाल का। ये खाद्य पदार्थ पाकस्थली को शान्त रखते हैं। मीठे फल भी ले सकते हैं परन्तु छिलकेवाला फल न हो क्योंकि छिलके युक्त फल घाव पर पड़ते ही दर्द उत्पन्न कर देते हैं। क्रमशः पथ्य को बढ़ाकर आराम होने पर नेनुआं का सूप दिन भर में ढाई सेर पी सकते हैं। मधु भी पानी या फल के रस के साथ लेना गुणकारी है। किशमिश

१२ घंटे पानी में भीगाकर लेना चाहिये, इसके अतिरिक्त कच्चे शाक सब्जियों का रस पाव भर तक ले सकते हैं।

इस तरह रसाहार के बाद स्थिति सुधर जाने पर पुराने चावल का गला हुआ भात दूध के साथ या उबले हुये शाक सब्जियों के सूप के साथ लेना हितकर होगा। चर्बी जातीय पदार्थ भी लेना आवश्यक है इसके लिये प्रधान खाद्य ओलिव आईल खाना खाने के पहले एक बड़े चम्मच भर लेना चाहिये। भात में क्रीम भी मिलाकर लेना लाभदायक है। यदि रोगी को पूर्ण आराम हो जाय तो शाक, सब्जियों का झोल, खूब पका केला और आलू उबालकर लेना चाहिये। रोग से मुक्ति पाने पर भी उपरोक्त पथ्यों के सहारे लगभग ६ मास रहना चाहिये। ताकि स्वास्थ्य की पुष्टि अच्छी तरह कर लेने से पुनः रोग का भय नहीं रहें।

जिन पदार्थों से पाकस्थली पर दबाव में बृद्धि हो ऐसे पदार्थ न लेना ही हितकर है। स्वास्थ्य संबंधी नियमों का हमेशा पालन करना चाहिये।

## पुराना पेचिश

इस रोग में बड़ी आंत के अन्तिम छोर या अन्य हिस्सों में सूजन आ जाती है। कभी-कभी तो इस रोग में घाव भी हो जाता है। यह बड़ा ही कठिन रोग है संसार के बहुत से प्राणी इस रोग से ग्रसित रहते हैं।

**लक्षण**— मल निकलने के पहले, कभी मल निकलने के बाद में आंव गिरता है, यही इस रोग का प्रधान लक्षण है। आंव सदा ही लोंदे के लोंदा गिरता है, कभी-कभी रस्सी के टुकड़े जैसा सूखे मल के ऊपर चिपका हुआ निकलता है। पुराने पेचिश की यह खास पहचान है।

रोगी को आवदस्त लेते समय हाथ में लचीला द्रव जैसा प्रतीत होता है। पेट में दर्द, कब्ज, गुदा मार्ग में जलन, कभी कभी रक्त और पीव का मल के साथ निष्कासन भी होता है। आंव हमेशा ही पतले दस्त के साथ आता है। अधिक दिनों तक रोग से ग्रसित रहने पर दुर्बलता, कमजोरी तथा स्वभाव का चिड़चिड़ापन आदि दशायें उपस्थित हो जाती हैं।

**कारण—** बार-बार रेचक औषधियों (जुलाब) का प्रयोग करने से पेचिश का रोग ग्रसता है। भोजन की अनियमितता और अनावश्यक दुष्पाच्य पदार्थों का सम्मिलित सेवन भी रोग का कारण बनता है। चाहे जिस किसी भी कारण से यह रोग क्यों न होता हो परन्तु विना कब्ज हुये यह रोग नहीं हो सकता। पुराना मल जो आंत में पड़ा हुआ सड़ता है वही इस रोग का कारण बनता है। इसी मल के सड़ान और औषधियों से रक्त दूषित हो जाता है तो प्रकृति उसे आंत के रास्ते निकाल देने की चेष्टा करती है तभी पुराना पेचिश होता है। इसलिये अन्य रोगों की तरह इसमें भी शरीर को विकार रहित करने के साथ साथ आंत पर भी ध्यान रखने से छुटकारा पाया जा सकता है।

**उपचार—** रोगी को सर्वप्रथम पेट साफ करके चिकित्सा शुरु करनी चाहिये। पेट साफ करने के लिये पहले एक-एक मिनट का गर्म ठंडा सेक लेकर शहद मिले पानी का एनिमा लेना चाहिये। परन्तु एनिमा का प्रयोग सावधानी से करना चाहिये ताकि आंत में पानी धीरे धीरे उतरे। पेट को भी सबल रखें। गर्म ठंडा सेक देकर एक-एक घंटे से पेट की लपेट लेकर बदलते रहना हितकर है। इस क्रिया को क्रमशः बढ़ाकर पूरी रात तक की लपेट लेनी चाहिये। पेट को सबल करने की प्रधान चिकित्सा गर्म ठंडा कटिस्नान है। कटिस्नान के बाद स्नान या घर्षण स्नान ले लेने से पेट दर्द आदि लक्षण समाप्त हो जाते हैं।

घाववाले पेचिश में जबकि मल के साथ रक्त या पीव आता है उस समय रोगी को गर्म ठंडे कटिस्नान का प्रयोग करना असंगत है।

सभी प्रकार की गर्म चिकित्सा से परहेज करना आवश्यक है। प्रबल अवस्था में रोगी को सुबह शाम पांव की पट्टी लेकर शरीर गर्म करके गीले तौलिये से बदन को पोंछ लेना चाहिये। विकार रहित होने के लिये प्रतिदिन कुछ समय के लिये धूप स्नान या बीच बीच में गीली चादर की लपेट ले लेना आवश्यक है। पादस्नान से भी बहुत लाभ होता है।

नीबू के रस को पानी में मिलाकर अधिक पीने से लघुशंका की मात्रा बढ़ जाता है और आन्तरिक विकार उसके साथ बाहर निकल जाता है। परन्तु यदि कभी दस्त शुरू हो जाय तो ठंडा पानी नहीं पीना चाहिये क्योंकि इससे मल का वेग और अधिक हो जाता है। तीव्र अवस्था में रोगी को काफी आराम करना चाहिये। कुछ हालत सुधरने पर रोगी आसन, व्यायाम इत्यादि शुरू कर दे तो हितकर होगा। परन्तु कमजोरी की अवस्था में सुबह शाम का घूमना ही आसन और व्यायाम का स्थान ग्रहण कर लेता है। स्नायु शक्ति को उद्दीप्त करने के लिये उत्थानपादासन, भुजंगासन, सर्वांगासन, हलासन, धनुरासन, उड्डियानबंध इत्यादि का अभ्यास करना चाहिये। जहां परिस्थिति अपने स्वभाव के प्रतिकूल हो वहां कभी नहीं जाना चाहिये। जिससे आनन्द और शान्ति का साम्राज्य छाया रहे वही प्रयत्न हमेशा करना चाहिये।

**पथ्य**—प्रबल अवस्था में मट्ठे के अतिरिक्त कोई खाद्य पदार्थ नहीं लेना चाहिये। इसके बाद रोगी के लिये शीघ्र पचनेवाले पदार्थ जिनमें फुजला न हो, लेने उत्तम हैं। विटामिन, खनिज-लवणयुक्त पदार्थ दही, प्रोटीन युक्त अन्य खाद्यों का सेवन करना आवश्यक है। दही से रोगी के आंतों में जीवन-रक्षक कीटाणु पैदा होते हैं और हानिकारक कीटाणुओं का खात्मा होता है, इससे रोगी को अधिक मात्रा में प्रोटीन मिलकर उसकी आवश्यकता दही से ही पूरी हो जाती है।

रोगी को उपवास से भी काफी लाभ होता है। अभ्यास हो जाने पर



एक लम्बा उपवास लेकर मठा कल्प कर लेने से रोगी शीघ्र अच्छा हो

जाता है यही इस रोग की प्रधान चिकित्सा है। प्राकृतिक चिकित्सक पुराने पेचिश के रोगी को मट्ठा कल्प से ही अच्छा करने की कोशिश करते हैं।

रोगी सदैव अपने पथ्य का ध्यान रखे। पथ्य में खूब पका केला हमेशा थोड़े नमक के साथ लेना हितकर है। पुरानी इमली की चटनी, खूब पका सेव, दही मधु आदि पथ्य ही श्रेष्ठ हैं।

पेट की हालत कुछ सुधर जाने पर सब्जियों का सूप, सब्जियों का झोल लाभदायक है। लौकी परवल, नेनुआ, खीरा, गाजर, तोरई आदि का झोल उत्तम है। फलों का रस या कच्ची सब्जियों का रस भी गुणकारी है। फुजले युक्त खाद्य से बचने के लिये उपरोक्त खाद्य पदार्थों के रस को कपड़े से छानकर पीना चाहिये। उपरोक्त खाद्य में जीवन रक्षक शक्ति पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है। यदि कब्ज की शिकायत हो तो आग में पका हुआ बेल लें। पुरानी इमली की चटनी खाद्य के साथ साथ औषधि का भी काम करती है। परन्तु इमली कम से कम १५..१६ साल पुरानी होनी चाहिये।

इसके अतिरिक्त मांस, मछली, मसाला; फुजलेयुक्त पदार्थ; तली-भूनी, देरसे पचनेवाली मैदे की सामग्री, चाय; काफी; कोको आदि से बचना चाहिये। कचौड़ी; पकौड़ी; खिचड़ी; दाल, यहां तक कि रोगीको सूखे फल; बादाम; खजूर; मुनक्का आदि तथा पालक जैसी सब्जियों से परहेज करना चाहिये। इतना ही नहीं रोगी को रोग की तीव्र अवस्था में दूध भी नहीं लेना चाहिये। इन सब पथ्यों से परहेज करके रोगी प्राकृतिक चिकित्सा विधि से हमेशा के लिये छुटकारा पा सकता है।

अन्य चिकित्सा पद्धति में तो इस रोग की कोई दवा ही नहीं है। इस रोग को समूल नष्ट करने के लिये औषधि का प्रयोग न करना ही हितकर है क्योंकि औषधि से अन्य रोग भी उत्पन्न होते हैं।

# उदरवायु ( अफरा )

पेट में हवा जमा होने का ही नाम है उदरवायु। इसकी तीन अवस्थायें हैं:—

१—वायु पाकस्थली में जमा होती है और डकार के रूप में मुँह के रास्ते बाहर निकल जाती है।

२—वायु आंत में जमा होती है और गुदा मार्ग से बाहर निकल जाती है।

३ पाकस्थली और आंत में ही वायु जमा रह जाती है न तो मुँह से बाहर निकलती है न गुदामार्ग से, बल्कि पेट को ही फुला देती है।

तीसरी अवस्था में मनुष्य को बड़ी तकलीफ होती है। रोग के पुराने हो जाने पर पाकस्थली और आंत दोनों में एक साथ ही वायु जमा रह जाती है। पेट पर मारने से डब-डब की आवाज आती है, और कभी-कभी पेट में ही अन्दर गड़गड़ाहट की आवाज आती है जोकि पास बैठे हुये अन्य व्यक्ति को भी सुनाई पड़ती है। कभी-कभी दर्द भी हो जाता है। पाकस्थली में वायु जमा हो जाने पर हृदय पर भी दबाव पड़ता है, जिससे हृदय रोग के लक्षण भी प्रतीत होते हैं। पाकस्थली और हृदय में बहुत ही कम अन्तर है। इससे हृदय रोग का भ्रम भी हो जाता है। ज्यों-ज्यों पेट की हालत में सुधार होता जायेगा त्यों त्यों उपरोक्त भ्रम भी दूर होता जायेगा। नये रोग में उदरवायु कुछ दिनों के इलाज से दूर हो जाता है परन्तु पुराना हो जाने पर हमेशा के लिये घर बना लेता है।

**कारण—** पेट में वायु जमा होने के कई कारण होते हैं। शाक सब्जियों के फुजले की सड़ान से या पाकस्थली की अन्य किसी खराबी से या आंत के अल्सर या पित्तपथरी रोग से ही होता है। कभी कभी

तो इसका दर्शन अजीर्ण रोग के लक्षण मात्र से होता है । जिनको स्नायुविक दुर्बलता के साथ अजीर्ण होता है प्रायः उन्हीं को ऐसा होता है ।

हमारे शरीर की आंत और पाकस्थली का भीतरी भाग खोखला है । शरीर की कार्बोनिक एसिड या दूसरे प्रकार की गैस आंत या पाकस्थली की दीवाल से निकलकर खाली स्थान को भरकर पाकस्थली और आंत को आसानी से फुला देती हैं । उपरोक्त क्रिया शरीर के विषैलेपन से होती है । इसलिये शरीर को पूर्णरूपेण स्वस्थ करने के साथ-पेट को सबल बना लेना आवश्यक है ।

**उपचार—** पेट पर गर्म ठंडा सेक, एनिमा, धूप स्नान के बाद ठंडे पानी से स्नान, घर्षण मालीश, सूखी मालीश, पेट की लपेट, कटिस्नान, लीवर की मालीश, भाप स्नान, गीली चादर की लपेट, व्यायाम, आसन द्वारा तथा आहार विहार सुधार कर शरीर को निरोग बना लेना ही इसकी प्रधान चिकित्सा है ।

पेट पर गर्म ठंडा सेक लेकर अन्त में सामान्य ठंडे पानी का एनिमा लेने से पेट भी साफ हो जाता है और वायु भी कम होती है । एनिमा से आंतों के कमजोर होने की बात कितने लोग भ्रमवश कहते हैं । किन्तु गर्म ठंडे सेक के बाद ठंडे पानी का एनिमा लेने से आंतों की शक्ति बढ़ती है । प्राकृतिक चिकित्सा में इसी को शक्तिवर्द्धक एनिमा कहा गया है ।

उदरवायु में कटिस्नान भी बहुत ही गुणकारी प्रयोग सिद्ध हुआ है । परन्तु कटिस्नान पेट की गर्म अवस्था में ही लेना चाहिये । यदि पेट गर्म न हो तो मालीश या व्यायाम द्वारा पेट को गर्म कर लेना चाहिये । इससे वायु जमा होना समाप्त होने के साथ-साथ पेट भी सबल हो जाता है । प्रायः पेड़ू पर ठंडा पानी डालते ही पेट में जमा वायु गुदा मार्ग से छूट जाती है इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को स्नान करने के पहले

पेडू पर चार पांच लोटा पानी अवश्य छोड़ना चाहिये।

पेट की लपेट या मिट्टी की ढकी हुई लपेट से भी बहुत चमत्कारिक फायदा होता है। यही इसका सरल एवं प्रमुख इलाज है। पेट यदि अधिक गर्म हो तो मिट्टी की ढकी हुई लपेट, नहीं तो सादी लपेट एक दो घंटे पर बदलते रहने से सन्तोषजनक लाभ होता है। यदि पेट ठंडा रहे तो गर्म थैली द्वारा गर्म कर लेने पर लपेट लेनी चाहिये। उपरोक्त क्रिया से भी वायु समाप्त हो जाती है।

मालीश से भी लाभ होता है, लेकिन मालीश एक विशेष ढंग से करनी चाहिये। घर्षण मालीश, कंपन मालीश, मर्दन मालीश तथा पेट के थपथपाने से भी यथेष्ट लाभ होता है। पेट की मालीश के साथ-साथ लीवर की भी मालीश करनी चाहिये। इससे पेट और लीवर दोनों सबल होते हैं और सुचारु रूप से काम करने लगते हैं।

रोगी के स्वास्थ्य में कुछ सुधार होने पर पेट और रीढ़ को सबल बनानेवाले व्यायाम करने चाहियें। सुबह शाम टहलना कमजोर रोगी के लिये अच्छा व्यायाम है। सबल रोगी को खुली हवा में उत्थानपादासन, शलभासन, धनुरासन, उड्डीयान, नौलीकर्म, पश्चिमोत्तानासन आदि करने चाहियें। पवन मुक्तासन लेने से पेडू की वायु शीघ्र बाहर निकल जाती है और रोगी को आराम हो जाता है। इसी कारण इसका नाम पवनमुक्तासन पड़ा है। बहुत बार स्नायुविक दुर्बलता के कारण यह रोग होता है। सुबह-शाम खुली हवा में टहलने से स्नायु शीघ्र सबल हो जाते हैं जिससे शरीर अपना कार्य सही ढंग से करने लगता है।

यदि पाकस्थली में अधिक मात्रा में वायु हो तो गर्म पानी में नीबू का रस निचोड़कर पीने से लाभ होता है। पुराने रोगों में जिस प्रकार दो ढाई सेर पानी दिनभर में पीना चाहिये उसी प्रकार इस रोग में भी आवश्यक है।

**पथ्य**—वायु की उपस्थितिमें रोगी को उपवास करना हितकर है, सि
पानी पर रहना चाहिये। खाद्य पदार्थ लेने से और तकलीफ बढ़ जाती
क्योंकि भोजन पच नहीं पाता। श्वास लेना मुश्किल हो जाता है। य
कुछ आराम हो जाय तो फलों का रस या मधु का पानी पीना चाहिये
यदि रोगी को अम्ल रोग है तो उसे मीठे फल का ही रस लेना हितक
होगा क्योंकि खट्टे फलों से अम्ल अधिक मात्रा में बढ़ जाता है।

उपरोक्त प्रयोग विधियों के साथ साथ रोगी को अपने पथ्य पर
ध्यान देना आवश्यक है। विशेष रूप से रोगी का भोजन दही होन
चाहिये, क्योंकि दही में वायु नहीं होती और साथ ही साथ यह पेट
हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट कर जीवन रक्षक जीवाणुओं को उत्प
करता है। कुछ दिनों का उपवास करके दही कल्प लेना चाहिये। बहुध
अधिक दिनों तक अजीर्ण रोग से ग्रसित रहने पर ही कुछ खा लेने
उदरवायु का प्रकोप होता है।

रोगी का खाद्य सुपाच्य एवं हल्का होना चाहिये। पुजलेयुक्त पदार्थ
का निषेध आवश्यक है। फलों का रस, सब्जियों का सूप, पुराने चाव
का अधिक पका हुआ भात, या दलिया लेना चाहिये। रोगी की
अवस्था सुधर जाने पर पथ्य में ढीलापन नहीं करना चाहिये।

मुलायम, तवे पर बनी गर्म रोटी, सेव, पपीता, जामुन
अनन्नास का रस सेवन करना हितकर है। नेनुआ, परवल, लौकी
कच्चा पपीता आदि की ताजी सब्जियों का झोल बना कर खान
चाहिये। भोजन खूब चबा चबाकर खायें।

रोगी को बासी, एवं ठंडा खाना कभी नहीं खाना चाहिये। बासी
खाना स्वस्थ पुरुष को भी हानिकारक है, तो रोगी को क्यों नहीं होगा
आहार एवं विहार के सुधार से ही आजीवन स्वस्थ रहा जा सकता है
अन्यथा नहीं। मुँह पर भी नियंत्रण होना आवश्यक है। जैसे कहावत है:—
"चटोरा व्यक्ति अपनी कब्र स्वयं अपने ही दांतों से खोदता है।"

## बवासीर ( Piles )

गुदा मार्ग के बाहर और अन्दर की नसों की सूजन को बवासीर कहा जाता है। बाहरी नसों की सूजन को बहिर्बलि व अन्दरूनी नसों की सूजन को अन्तर्बलि बवासीर कहते हैं। बाहरी और भीतरी दोनों नसों में एक साथ सूजन आने पर मिश्रित बवासीर कहा जाता है। इसकी दो अवस्थायें होती हैं। पहली अवस्था खूनी और दूसरी बादी।

**कारण**— गुदा मार्ग की बाहरी नसों में प्रायः ठंड लग जाने या अन्य किसी कारण से सूजन आ जाती है। परन्तु बिना कुछ तकलीफ पहुंचाये यह अच्छी भी हो जाती है। जब मल सूखकर कड़ा हो जाता है, बवासीर फूलकर बड़ा और लाल हो जाता है, मल त्याग के समय जलन एवं तकलीफ होती है। चलने-फिरने, कुर्सीपर बैठने आदि में बड़ा ही कष्ट होता है। प्रायः मल के साथ एक प्रकार का मवाद निकलता है। लगभग छः से बारह दिन के अन्दर ही अच्छा भी हो जाता है। प्रायः ऐसा बवासीर कब्ज के कारण होता है।

गुदामार्ग की भीतरी नसों में सूजन लगभग १ इंच में आ जाती है, परन्तु इसके किसी खास अस्तित्व का पता नहीं चलता। केवल मल त्याग के समय काला रक्त निकलता है। पुराना हो जाने पर अधिक मात्रा में रक्त-क्षय से रक्तहीनता का आभास होता है। मल के साथ आंव या रक्त हमेशा कुछ न कुछ जाता ही है। कभी यदि मलमार्ग के भीतर सूजन अधिक हो जाय तो वह मल-त्याग के समय बाहर आ जाती है और जोर का दर्द होता है और जब सूजन नहीं रहती तो दर्द नहीं होता।

जिस प्रकार कब्ज सभ्य समाज की व्याधि है उसी प्रकार बवासीर को भी उसी की श्रेणी में रखा जा सकता है। इससे यह सिद्ध होता है कि दोनों रोगों के कारण एक ही हो सकते हैं। अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति कब्ज रोग से पीड़ित होगा वह बवासीर के सिकंजे में अवश्य

ही पड़ सकेगा। "मृषा ना होई देवऋषि वाणी"

भोंजन की अधिकता, घी में तली भूनी मैदे की चीजें, तेल से बने हुये दुष्पाच्य पदार्थ अत्यधिक मात्रा में सेवन करना, इसके अतिरिक्त फल, सब्जी, सलाद आदि का स्थान भोजन में न रखना, पानी कम पीना, मेहनत का काम न करना आदि इस रोग के कारण बनते हैं। उपरोक्त कारण एकत्रित होते-होते फिर कार्य बनता है। इसलिये हर व्यक्ति को चाहिये कि उपरोक्त कारण ही न एकत्रित होने दे।

कभी-कभी तो ठंडी जगह पर या गीली मिट्टी अथवा कुर्सी पर बैठने की अधिक दिनों की आदत से जब नितंब प्रदेश का रक्त संचालन बन्द या कम हो जाता है और उस अंग पर एकत्रित रक्त दूषित हो जाता है, तो उस रक्त को बाहर निकालने के लिये प्रकृति मलमार्ग को अपनाती है। उसी को बवासीर कहा जाता है। बहुधा बवासीर कब्ज के कारण होता ही है। मल जब मलाशय से निकलने में कष्ट देता है या यों कहा जाय कि जोर लगाना पड़ता है तो प्रायः उस अवस्था में भी बवासीर हो जाता है। बहुत पुराना मल गुदा मार्ग में इकट्ठा रहने पर भी हो जाता है।

अधिक दिनों की कोष्ठबद्धता से जब शरीर नाना प्रकार के विषाक्त पदार्थों से बोझिल हो जाता है तो भी बवासीर अक्सर हो जाया करता है। इसलिये कब्ज दूर करके शरीर की सफाई से ही बवासीर से छुटकारा पाया जा सकता है।

संसार के जिन रोगों के नाम पर लोग अधिक धन संग्रह कर रहे हैं उनमें बवासीर का स्थान श्रेष्ठ है। डाक्टर आपरेशन से, साधु सन्त जन जड़ी बूटियों से अच्छा करने की चुनौती देते हैं। समाचार पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञापन द्वारा समूल नष्ट करने की चुनौती दे देकर लोगों को हैरान कर डालते हैं। रोगी कभी डाक्टर-वैद्य का दरवाजा खटखटाता

है तो कभी साधु सन्तों के आश्रमों के धक्के खाता है। परन्तु ज्यों ज्यों रोग का इलाज करता है त्यों त्यों वह उग्ररूप धारण करता जाता है।

उपचार— औषधियां और आपरेशन इस रोग में असफल चिकित्सा मानी जाती है शरीर के आन्तरिक विषैले पदार्थों पर ध्यान न देना ही इसका कारण है।

इसलिये रोगी को सर्वप्रथम अपना पेट साफ कर लेना चाहिये। परन्तु रेचक औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये। कटिस्नान, पेट की लपेट, पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी लेकर पेट साफ करने की चेष्टा करना ही हितकर है। हमेशा कोष्ठ साफ रहे ऐसी कोशिश हमेशा करते रहना चाहिये। कब्ज से अधिक परेशान हों तो बेल, अमरूद, मुनक्का, खुमानी, अंजीर, गाजर, टमाटर, पपीता आदि कुछ दिन खाकर पेट साफ रखना हितकर होगा, रोग के समय भोजन के साथ शाम को चार आने भर इसबगोल की भूसी का सेवन करना चाहिये। परन्तु स्वास्थ्य में ज्यों ही सुधार हो उसका त्याग कर देना चाहिये।

रोग की प्रबल अवस्था में अधिक पानी का अधिक गर्म एनिमा नहीं लेना चाहिये। थोड़े से पानी का ही एनिमा लेकर पेट साफ कर लेना चाहिये। शाम को सोते समय थोड़े ठंडे पानी का एनिमा लेकर सोने से सुबह पेट अच्छी तरह साफ भी हो जाता है और जलन भी शान्त रहती है।

जिस समय रोग के प्रकोप की सम्भावना हो, अर्थात् नितम्ब की नसों में रक्त की बहुतायत का आभास होवे तो उसे दूर करने की चेष्टा करनी चाहिये। ऐसी दशा में १० मिनट का गर्म पादस्नान लेकर १ घंटे की पैर की पट्टी लेने से नितम्ब के अतिरिक्त रक्त का प्रवाह पांव की तरफ हो जाता है। इससे रोगी को आराम हो जाता है। उपरोक्त विधि आवश्यकतानुसार दिन में दो तीन बार करनी चाहिये। यदि पेट गर्म रहे

तो मिट्टी की पट्टी या लपेट लेने से पेट आसानी से साफ हो जाता है।

जब कभी बवासीर में सूजन या जलन अधिक हो तो बिस्तर पर ही आराम करना आवश्यक है ऐसी अवस्था में रोगी को नितम्ब ऊँचा उठाकर ठंडे पानी की पट्टी रखनी चाहिये। परन्तु पानी मिट्टी के घड़े का या बर्फ का होना चाहिये। ठंडी मिट्टी की पट्टी भी इसके लिये उपयोगी सिद्ध हुई है। हाथ पांव को गर्म रखते हुये ठंडे पानी का कटिस्नान लेने से जलन शान्त हो जाती है। इसके अतिरिक्त बवासीर के ऊपर गर्म ठंडा सेक भी लाभदायक है, यदि यह क्रिया न की जाय तो गर्म ठंडा कटिस्नान आवश्यक है।

कभी कभी बवासीर मलद्वार के बाहर निकल आता है ऐसी परिस्थिति में थोड़ा नारियल का तेल लगाकर भीतर घुसा देना चाहिये। नितम्ब को ऊपर करके छाती को नीचे की ओर करके आराम करना हितकर है और बवासीर के ऊपर खूब ठंडी पट्टी का प्रयोग करें। उपरोक्त प्रयोग विधियों को सावधानी पूर्वक करना चाहिये।

एक बार आराम हो जाने पर चुप बैठ नहीं जाना चाहिये क्योंकि पुनः इसका आक्रमण हो सकता है। इसलिये शरीर को बिल्कुल विकार रहित कर लेने से पुनः रोग की सम्भावना नहीं रह जाती। प्रतिदिन धूपस्नान, पैरस्नान या हल्का भापस्नान लेकर स्नान करना चाहिये। स्नान करने के पहले गर्म ठंडा कटिस्नान लेने से भी चमत्कारिक लाभ होता है। प्रायः इससे गुदा का बाहर आना भी बन्द हो जाता है। नितम्ब की नसें भी स्वस्थ हो जाती हैं। ऐसा इसलिये होता है कि कटि प्रदेश में रक्त का संचार नियमित होने लगता है। स्नान करने के बाद सूखी मालीश आवश्यक है। शरीर को विकार रहित करने के लिये रोगी को पूरे समय का भापस्नान या गीली चादर की लपेट अवश्य सप्ताह में लेनी चाहिये। इससे शरीर पूर्ण रूपेण विकार रहित हो जाता है।

व्यायाम और आसन से रक्त-संचालन बराबर होता रहता है, रक्त एक जगह रुक-कर विषैला नहीं हो पाता। इसलिये आसन व्यायाम आवश्यक है। इससे कब्ज होने की सम्भावना भी जाती रहती है। सर्वांगासन लेने से गुदा का बाहर आना भी रुक जाता है। स्वास्थ्यवर्द्धक सभी आसनों का प्रतिदिन अभ्यास करना आवश्यक है। सुबह शाम खुली हवा में टहलना भी एक व्यायाम ही है।

प्रतिदिन नियमित रूप से पेट और लीवर (यकृत) कीं मालिश करनी चाहिये। पेट और लीवर के साथ साथ गुदामार्ग की मालिश भी लाभकारी प्रयोग है। परन्तु इसकी मालिश एक विशेष प्रकार से होती है। मध्यमा अंगुलीमें नारियल का तेल लगाकर गुदामार्ग में जितनी अन्दर तक जा सके घुसाकर अंगुली को धीरे धीरे घुमाने से मालिश हो जाती है। इसी को योग-शास्त्र में गणेश-क्रिया कहते हैं। कब्ज भी दूर करने का यह अच्छा उपाय है। इससे मल त्याग के समय विशेष जोर लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु रोग की प्रकोपावस्था में उपरोक्त विधि कभी नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ऐसा करने से कष्ट अधिक होगा।

**पथ्य**—सदैव कोष्ठ साफ रखनेवाले पथ्य लेते रहना चाहिये। जिससे कि रोगी को दिन में दो बार शौच आसानी से हो जाय और जोर लगाने कीं आवश्यकता न पड़े। फल, फल के रस, शाक-सब्जी तथा चोकर समेत रोटी खाने से तो पेट साफ हो जाता है, परन्तु किसी किसी रोगी को तकलीफ होती है, ऐसा अक्सर खूनी बवासीर वालों को होता है क्योंकि उनके गुदामार्ग की नसें कोमल हो जाती हैं। जरासा भी खराश लगने से खून निकलने लगता है। रोगी को अपने पथ्य को चुनने में बड़ी सावधानी बर्तनी चाहिये। मल मुलायम हो और पदार्थ सुपाच्य हो ऐसा ही पथ्य होना चाहिये। गेहूं का दलिया, लौकीं, परवल, पपीता, नेनुआ, बथुआ आदि का शाक, खरबूजा, तरबूज, सेव आदि फल लेने चाहियें तथा अन्य फल और सब्जी को खाकर अनुभव कर लेना

चाहिये यदि उनसे तकलीफ बढ़े तो न लें। फल और सब्जी के अलावा सलाद आदि को भोजन में शामिल कर लेना चाहिये। मल को मुलायम और पेट साफ रखने के लिये रोगी को प्रतिदिन अपने भोजन में इसबगोल की भूसी अवश्य लेनी चाहिये। इसे ताजे दूध या एक उबाल के दूध में लेना हितकर है।

जितने दिनों तक रोगी को बवासीर से रक्त जाता रहे उतने दिन तक फल का रस, मठा, डाब का पानी, दही, शाक का सूप आदि लेकर रहना चाहिये। नियमानुसार दिनभर में ढाई तीन सेर पानी भी पीना आवश्यक है।

समय पर खाना, समय पर नहाना न भूलो। पर यदि परोपकार करने का अवसर मिले तो इन दोनों को छोड़ सकते हो। और भगवान भजन में सब छुट जाय तो उसकी चिन्ता न करें।

\+ + +

स्वच्छता स्वास्थ्य की प्रथम सीढ़ी है।

० ० ०

मनुष्य जीवन से प्रेम तभी करता है जब वह स्वस्थ है।

× × ×

चिन्ता चिता की सगी बहन है।

# चतुर्थ अध्याय

## आहार और स्वास्थ्य

**आहार या भोजनः—** प्राकृतिक चिकित्सा की आधारशिला भोजन ही है। नब्बे प्रतिशत रोग केवल भोजन सुधार से अच्छे किये जा सकते हैं। बिना भोजन सुधार से हजारों प्रकार की औषधियां बेकार हैं। कहावत है Food cures more than Doctor. प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी, पानी, धूप, हवा के विभिन्न प्रयोगों की सहायता से समस्त रोग अच्छे किये जाते हैं। परन्तु यदि भोजन में सुधार न किया जाय तो तमाम प्रयोग व्यर्थ हैं। रोगी को निरोग हो जाने पर भी उसे अपना भोजन संतुलित रखना ही चाहिये। जिस प्रकार मशीन के खराब हो जाने पर सम्भाल कर उपयोग करने पर ही कुछ दिन चलती है उसी प्रकार मानव काया।

जीवित रहने के लिये भोजन आवश्यक है परन्तु भोजन के लिये जीवित रहने की आवश्यकता नहीं। तात्पर्य यह है कि भोजन उसी सीमा तक होना चाहिये कि स्वास्थ्य खराब न हो ताकि कुछ काम-धाम भी किया जा सके। नये रोग के रूप में शरीर जब अपनी सफाई में लगा रहता है तो उस अवस्था में कुछ नहीं खाना चाहिये और यदि खाये भी तो थोड़ा, क्योंकि खाने से रोगी को कुछ लाभ नहीं होता बल्कि रोग को ही लाभ होता है। इसलिये नई बीमारी में रोगी को खिलाना रोग को खिलाना है। नये रोग में प्रायः रोगी को उपवास करके ही रहना उत्तम है। पुराने रोगों में पथ्य हमेशा उनकी अवस्था का मेल बिठाकर फल, फल का रस, मांड, मट्ठा, दूध, दही, विभिन्न शाक-सब्जियां, मूल

रोटी अल्प मात्रा में लेने चाहियें। जीवन शक्ति को सक्रिय बनानेवाले खाद्य का प्रयोग करना उत्तम है, जिससे कि रोग के मुकाबले वे लड़ सकें। इसलिये उपरोक्त खाद्य के ऊपर ही रोगी को विशेष जोर देना चाहिये।

रोगी को देर से पचनेवाले, तली भूनी चीजें, जैसे मांस, मछली, अंडा, चाय, काफी, पूड़ी. कचौड़ी, खांर, मिटाई, हर प्रकार के मसाले आदि से सदैव परहेज करना आवश्यक है। भात, रोटी पर भी विशेष रूप से आधारित नहीं रहना चाहिये। प्रधान खाद्य फल, फल का रस, कच्ची सब्जी का रस होना आवश्यक है। दूसरा स्थान फलाहार, शाकाहार, दुग्धाहार, अन्नाहार क्रमशः रखना चाहिये।

हमारे शरीर की गठन विभिन्न प्रकार के उपादानों से होती है। ये उपादान प्रोटीन, शर्करा, खनिज लवण, विटामिन और जल द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं। जिस प्रकार ईंट, चुना, सीमेंट, राख आदि मसालों को सामान्य रूप में मिलाकर अच्छी और मजबूत इमारत बनाई जाती है उसी प्रकार उपादानों को एकत्रित करके अच्छे और मजबूत शरीर की गठना की जा सकती है। इसलिये पथ्य को बदलते रहने से प्रत्येक उपादानों की पूर्ति हो जाया करती है।

बीमारीकी अवस्थामें प्रधान पथ्य रसादि आहार है, जैसे नीबूके रस के साथ पानी, शहदमें मिला पानी सभी रोगोंमें सुपाच्यके अतिरिक्त औषधिका भी काम करता है। इसी तरह पतला मट्ठा भी दस्त आदि में औषधि है। फलों का रस, छेने का पानी, तरकारी का सूप, रसीले फल, नारियल का पानी, मौसम्बी का रस आदि पथ्य रोग का तालमेल बिठाकर देने से औषधि ही हैं।

अधिक भोजन, बार बार भोजन करना हानिकर है। "थोड़ा खाना अपने लिये, अधिक खाना डाक्टर के लिये"। इसीसे संबंधित घाघ की

भी कहावत है "रहै निरोगी जो कम खाय, काम न बिगड़े जो गम खाय"। अधिक भोजन कर लेने से भोजन का तो नुकसान होता ही है साथ ही साथ स्वास्थ्य भी खराब हो जाता है। जो लोग कम खाते हैं वे अधिक दिन तक जीवित रहकर अन्तिम हिस्से तक भोजन का उपभोग वे ही करते हैं इस प्रकार अधिक खाने वालों की अपेक्षा कम खाने वाला अधिक खाता है

भोजन उतना ही करना चाहिये कि भोजन के दूसरे समय भूख अवश्य लग जाय। भूख के रहने पर खाना अमृत समान लगता है विना भूख के निःस्वाद। अन्यथा देर से पचता भी है और विष का काम भी कर जाता है।

भोजन में सदैव कम मात्रा में मसाले आदि का प्रयोग करें। फिर भी भोजन स्वादिष्ट एवं पौष्टिक होना अनिवार्य है। भगवान् के पूजन में जैसी स्वच्छता और सफाई रखी जाती है वैसी ही भोजन में भी। खाद्य पौष्टिक, स्वादिष्ट और सुपाच्य क्यों न हो यदि भोजन के समय खानेवाला ईर्ष्या–क्रोधादि विकारों से त्रस्त है तो सब व्यर्थ है। भोजन के समय रूखा सूखा जो भी मिले प्रसन्न चित्त, एवं शान्त वातावरण में प्रेम से खाना चाहिये। भोजन की निन्दा कभी नहीं करनी चाहिये। भोजन के समय सदैव अन्न की पूजा करनी चाहिये।

सदैव हाथ, पांव धोकर अच्छी तरह से कुल्ला कर स्वच्छ होकर, भोजन स्वच्छ पात्र में रखकर राजा की भांति निश्चित बैठकर खाना चाहिये। दांत मुँह में हैं इसलिये खूब चबा कर खायें मुँह का काम यदि पेट पर छोड़ दिया गया तो अवश्य ही स्वास्थ्य पर गहरा आघात लगेगा। जो लोग खाने में ज्यादती या जल्दबाजी करते हैं, उन्हें भोजन का पूरा लाभ नहीं मिलता, बल्कि उल्टे नाना प्रकार के रोगों का प्रादुर्भाव होता है, क्योंकि विना चबाये खाने से मुँह का काम आंतों को करना पड़ता

है और वे दिन ब दिन शिथिल होती जाती हैं। चबाकर खाने से थोड़ी खुराक से अधिक सत्व प्राप्त किया जा सकता है।

भोजन के बाद थोड़ी देर तक आराम अवश्य करना चाहिये। घाघ ने कहा है:—

१— "खाइके मूतै, सूतै बांउ।
काहे वैद्य, बसावे गांउ॥"

२— "भोजन करके परै उतान,
आठ स्वांस छोड़ै परमान।
सोलह दाहिने, बत्तिस बायें,
तब कल परै अन्न के खाये॥"

भोजन के तत्काल बाद, लिखा पढ़ी, मानसिक परिश्रम, दूकान, कार्यालय, स्कूल आदि के कामों में लग जाना हानिकारक है। शरीरिक परिश्रम भी नहीं करना चाहिये। आराम से तात्पर्य सोने से ही नहीं, बल्कि कुर्सी या किसी स्थान पर शरीर को ढीला छोड़कर बैठ जाना भी है। भोजन के तुरन्त बाद सोने से भी भोजन सुचारु रूप से नहीं पचता। भोजन करने के ढाई तीन घंटे बाद सोने से पाचन क्रिया ठीक से होती है। जिस प्रकार भोजन के बाद परिश्रम नहीं करना चाहिये उसी प्रकार परिश्रम के बाद ही भोजन भी नहीं करना आवश्यक है।

## दुग्धाहार

दूध हमेशा स्वस्थ पशु का लेना चाहिये। बीमार पशु का दूध ग्रहण करने पर लाभ के बदले हानि करता है। अन्य खाद्य पदार्थों की अपेक्षा दूध में अधिक पोषक तत्व होते हैं।

स्वस्थ पशु का दूध स्वच्छ पात्र में दुह कर कपड़े से छानकर तुरन्त पी जाना अत्यन्त हितकारी है और यही धारोष्ण दूध कहा जाता है। धारोष्ण दूध अमृततुल्य है। देर का दुहा हुआ दूध एक ऊफान गर्म करके पीना चाहिये। एक ऊफान गर्म करने से रोगाणु नष्ट होते हैं और अधिक गर्म करने से तो दूध के सभी गुण नष्ट हो जाते हैं। आग पर अधिक समय तक दूध रखने से दूध के सत्व की हत्या कर देना है। दूध गर्म करने का सबसे श्रेष्ठ उपाय है गर्म जल के भीतर दूध का पात्र रख कर दूध गर्म करना।

हमारे पूज्य बापू गान्धीजी ने एक बार यह विचार किया कि गाय भैंस का दूध उनके बच्चों का है न कि मानव समाज का। इसलिये उन्होंने तब संकल्प किया कि मैं दूध नहीं लूंगा। सन १९१७ में गांधीजी भयंकर रोग के पंजे में आ फँसे। डाक्टरों ने उन्हें दूध लेने की सलाह दी, परन्तु बापूजी एक दृढ़ प्रतिज्ञ एवं महान पुरुष थे; अपनी प्रतिज्ञा कैसे तोड़ते। परन्तु माता कस्तूरबा ने आग्रह किया कि आपने गाय, भैंस का दूध न लेने की प्रतिज्ञा की है, बकरी के दूध की नहीं। गान्धीजी राजी हो गये और बकरी के दूध से ही वे स्वस्थ हो गये। तभी से वे बकरी पालने लगे और उसी के दूध का सेवन करने लगे।

परन्तु आधुनिक सभ्यता के अनुसार शहरों में गाय और भैंस रखने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। गाय और भैंस के गोबर से गन्दगी फैलती है। कहकर पालने वालों को सरकार जुर्माना और सजा भी कर देती है। पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार लोग अपनी मेमसाहिबा की गोद में कुत्ते को देखकर प्रसन्न होते हैं एवं मोटर कार में साथ लेकर घूमते भी है। परन्तु दुःख इस बात का है कि भारतवासी अपनी प्राचीन संस्कृति को ठुकरा कर नाना प्रकार के दुःख उठा रहे हैं। हमारी संस्कृति के अनुसार जिस स्थान पर कुत्ते चले जाते थे उस स्थान को गाय के गोबर से लीपकर पवित्र किया जाता था जैसा कि आज भी नाम मात्र के लिये भगवत् पूजा में किया जाता है। हमारे पूर्वज अपने घरों को गाय के

गोबर से ही लीप-पूतकर साफ करते थे। इन्हीं गायों के गोबर को आज गन्दगी का रूप दिया जाता है। यही कारण है कि शहर के लोगों को धारोष्ण दूध नहीं मिल पाता। बाजारू दूध लाते हैं जो कि अविश्वसनीय होता है। उसमें कई प्रकार की मिलावट रहती है। वह लाभ करने के बदले नुकसान ही कर बैठता है। दूध यदि खरीद कर ही खाना है तो क्यों न अच्छे ग्वाले या डेरी पर से खरीदें। जो लोग कुत्ते पालने के शौकीन हैं उनसे आग्रह है कि वे कुत्ते के बदले एक गाय पालें जिससे उन्हें धारोष्ण दूध भी मिल जाया करेगा और गाय माता की सेवा भी हो जायगी।

बालक जन्म से ही अपनी माता का दूध पीकर स्वस्थ रहता है और विकास पाता है। इससे प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है कि दूध पूर्ण भोजन है, परन्तु इसकी पूर्ति अधिक मात्रा में दूध पीने से ही होती है। शरीर को गठित करने के लिये दूध के समान दूसरा खाद्य नहीं, इसीलिये प्राकृतिक चिकित्सक वजन बढ़ाने के लिये दूध-कल्प कराते हैं।

## दूध कल्प

दूध कल्प लेने के लिये सर्व प्रथम तीन दिन तक फलाहार, तीन दिन तक रसाहार, तीन से दस दिन तक उपवास करके भूख बढ़ा लेनी चाहिये। साथ ही शरीर की शुद्धि भी। इसके लिये उपवास काल में एनिमा द्वारा पेट साफ करते रहना चाहिये। फलाहार, उपवास जितना अधिक दिन का होगा उतना ही दूध-कल्प से लाभ होगा। फलाहार, उपवास से भूख बढ़ जाने पर दूध-कल्प शुरू करना चाहिये। गाय का धारोष्ण दूध मिल सके तो बहुत ही अच्छा होगा अथवा दूध को एक उबाल देकर काम में लाना चाहिये। दूध कल्प आरम्भ करने का सबसे अच्छा तरीका है कि सुबह जिस समय से दूध पीना शुरू किया जाय शाम को उतने ही बजे समाप्त कर दिया जाय। आरम्भ के दिन आधा पाव दूध हर दो दो घंटे पर लेते रहना चाहिये। दूसरे दिन पौना पाव

पर पौने दो घंटे पर, तीसरे दिन एक पाव हर डेढ़ घंटे पर लेते रहें। इस प्रकार दूध की मात्रा बढ़ते रहना चाहिये और समय कम करते जाना चाहिये। भूख के अनुसार दूध ५ से ७ सेर तक वयस्क व्यक्ति ले सकता है। दूध कल्प आवश्यकतानुसार ३० से ४० दिन तक का किया जा सकता है। कल्प जिस प्रकार शुरू किया जाता है उसी प्रकार समाप्त भी किया जाता है। समाप्ति करने के पहले दिन दो बजे तक दूध पीना चाहिये और बाकी समय में दूध के स्थान पर फल का रस लेना चाहिये। दूसरे दिन बारह बजे तक दूध और बाद में फल का रस। इसी प्रकार दूध की मात्रा कम करके फल के रस, फल, सब्जी और सलाद की मात्रा बढ़ाते हुए फिर रोटी और चावल के आहार पर आ जाना चाहिये। रोटी, सब्जी और चावल की मात्रा धीरे धीरे बढ़ाते जाना चाहिये। भोजन सात्विक हो। दूध कल्प के दिनों में यदि कोष्ठबद्धता रहे तो एनिमा द्वारा पेट साफ करते रहना हितकर है। धूप स्नान के बाद स्नान तथा आराम करना आवश्यक है।

कल्पों में दूध कल्प का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। कल्प का अर्थ है शरीर को नया बना देना। शारीरिक क्षीणता की पूर्ति जितनी जल्दी दूध कल्प से होती है उतनी अन्य कल्पों से नहीं। इसी कारण शास्त्रों में दूध को अमृत कहा गया है। दूध कल्प करने से कोष्ठबद्धता, बवासीर, अनिद्रा, अल्सर, स्नायुविक दुर्बलता, पुराना पेचिश, पाकस्थली का अम्लत्व, गठियां मूत्राशय की सूजन, पाकस्थली की सूजन आदि रोगों में लाभ होता है।

## मट्ठा कल्प

मट्ठा कल्प, दूध कल्प के समान लिया जाता है। अन्तर केवल इतना है कि दूध के बदले मट्ठा पी लिया जाता है। कुछ रोगों में दूध कल्प की अपेक्षा मट्ठा कल्प ही करना आवश्यक होता है। मधुमेह के रोगी को दूध की शर्करा नुकसान करती है। दही जमाने से दूध की शर्करा

खटाई में बदल जाती है, इसीलिये इस रोग में दूध कल्प की अपेक्षा मठ्ठा कल्प से अधिक लाभ होता है। संग्रहणी के रोगी को भी मठ्ठा कल्प ही लेना चाहिये। आंत में रक्षक कीटाणुओं को जन्म देने के लिये मठ्ठे के समान धरती पर और दूसरा कोई खाद्य नहीं है। इसलिये मठ्ठा "धरती का अमृत" नाम से सम्बोधित किया जाता है। पुराना आंत्र, चर्म रोग मठ्ठा कल्प से ही जाता है। गाय के धारोष्ण दूध से जमाये गये दही से मठ्ठा कल्प करने पर एक्जमा जैसे हठीले रोग शरीर से सदैव के लिये विदा हो जाते हैं।

मठ्ठा हमेशा धारोष्ण दूध के जमाये हुए दही का ही जीवन शक्ति बढ़ाने में श्रेष्ठ होता है। एक ऊफान का दूध भी जमाकर मीठा दही काम में लाना गुणकारी है। इसलिये शाम का जमाया दूध सवेरे और सवेरे का जमाया दोपहर के बाद लेना चाहिये। दही से आधा पानी मिलाकर उसे मथ लेना आवश्यक है।

दही हमेशा साफ सुथरे मिट्टी, शीशे; स्टील या कलई किये हुये बर्तन में जमाना चाहिये। दुबारा जमाने के लिये धोकर तीन चार घंटे धूप में बर्तन सुखा लेना आवश्यक है। पीतल के बर्तन में दही कभी भी नहीं जमाना चाहिये।

## रोटी

रोटी किसी अच्छे अन्न को लेकर हाथ-चक्की से पिसा लेना। रोटी के लिये सभी अन्नों में गेहूँ ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। रोटी बनाने के लिये आटे को कभी भी छानना नहीं चाहिये। चोकर समेत रोटी स्वास्थ्य के लिये गुणकारी है। रोटी बनाने के तीन चार घंटे पहले ही आटे को गूंदकर रख देने से रोटी अच्छी बनती है।

## चावल



कण समेत चावल हाथ का कूटा ही, स्वास्थ्य के लिये लाभदायक

है और वही पूर्ण चावल है। पकाते समय पानी उतना ही डालना चाहिये, जिससे मांड निकालने की आवश्यकता न पड़े। मांड निकाल देने से चावल का तत्व भी साथ साथ निकल जाता है। चावल का कण ही पाचन का काम करता है। कण सहित चावल जल्दी पचता है और स्वास्थ्य के लिये लाभदायक सिद्ध हुआ है।

## दलिया

दलिया बनाने के लिये अच्छा गेहूं अच्छी तरह छान-बीन कर साफ कर लेना चाहिये। चक्की से छोटे-छोटे टुकड़े के रूप में दलवा लेना चाहिये। यह चूरे के रूप में होना चाहिये। बहुतों की राय है कि दलिया बनाने के लिये पहले उसे घी में अच्छी तरह भूनें, स्वाद की दृष्टि से यह उत्तम उपाय है, स्वास्थ्य की दृष्टि से नहीं। पानी में अच्छी तरह उबाल कर दलिया बनाना स्वास्थ्य के लिये हितकर है। पानी उतना ही डाला जाय कि कुछ पतला दलिया रहे, यदि पानी की कमी पड़े तो अलग से पानी गरम करके छोड़ देना चाहिये। नमकीन बनाना हो तो नमक छोड़े और यदि मिठा बनाना हो तो किशमिश, मुनक्का, खजूर आदि सूखे फल छोड़ें यदि मिठास न हो तो थोड़ा गुड़ डाल सकते हैं। श्रेष्ठ दलिया यदि बनाना हो तो उसे पानी में उबालकर ठंडा होने दें, फिर उसे शहद के साथ सेवन करें। यह स्वास्थ्य के लिये बहुत ही गुणकारी है। दूसरी जाति का दलिया सब्जियों के साथ बनाया जाता है यह हमेशा नमक के साथ अच्छा होता है। यह विभिन्न प्रकार की सब्जियों को डालकर बनाया जाता है। यह प्रायः खिचड़ी का काम देता है। दलिया रोटी, चावल से शीघ्र ही पचनेवाला भोजन है।

## सब्जियां

सब्जी काटने के पहले अवश्य धो डालनी चाहिये। काटने के बाद धोने से सब्जी का रस पानी में उतर जाता है। सब्जी को टुकड़ा

बर्तन में ढक कर धीमी आग से पकाना चाहिये। सब्जी में थोड़ा पानी आवश्यकतानुसार डाल देना चाहिये, जिससे कि सब्जी का रस न जल कर पानी ही जले। सब्जी के रस के जल जाने पर उसके तमाम तत्त्व भी जल जाते हैं। मिर्च मसालों से मिली सब्जी स्वाद की दृष्टि से अच्छी हो सकती है किन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकर होती है। सब्जी यदि कच्ची ही खाई जाय तो स्वास्थ्य के लिये बहुत ही उपयोगी होती है। कच्ची यदि न खाई जा सके तो उबालकर खाना चाहिये। सब्जी का छिलका यदि मुलायम है तो उसे उतारना नहीं चाहिये। सब्जी में नमक, धनियां, जीरा, हल्दी के अतिरिक्त कुछ नहीं डालना चाहिये। नमक जितना कम खाया जाय उतना ही अच्छा है। सब्जी पक जाने पर थोड़ा घी डालकर स्वादिष्ट बनाया जा सकता है। यह नहीं भूलना चाहिये कि सारा स्वाद भूख में ही होता है। भूख में जो कुछ भी खाया जाता है सभी रुचिकर लगता है। बिना भूख के अमृत भी हलाहल विष के सदृश है। सब्जी को तलकर स्वादिष्ट बनाने के बदले अपनी भूख ही बढ़ाना हितकर होगा।

## सलाद या कचुम्बर

कच्ची खाई जाने वाली सभी तरकारियों से बनाया जाता है जैसे ककड़ी, खीरा, गाजर, मूली, टमाटर, धनियां की पत्ती, पालक, पातगोभी, प्याज आदि इन सब को छोटे छोटे टुकड़े काट कर मिलाना चाहिये और उसमें नीबू का रस, दही, नमक, जैतून का तेल अथवा थोड़ा सा मक्खन डालकर स्वादिष्ट बना सकते हैं। इस प्रकार जो वस्तु तैयार होती है उसे ही सलाद कहा जाता है। यह अंकुरित या हरे अन्न और फलों द्वारा भी बनाया जाता है। मटर या चना या अंकुरित चने आदि में धनियां की पत्ती, टमाटर, प्याज, नीबू का रस डालकर अच्छा सलाद बनता है। इसी प्रकार अमरूद, टमाटर, पपीता आदि फलों द्वारा अच्छा सलाद बनता है। सलाद खाने से पेट अच्छा साफ होता है और

जीवन शक्तियां बढ़ती हैं। यह पथ्य प्राकृतिक अवस्था में होने से खाद्योज से भरपूर रहता है। इसी कारण सलाद स्वास्थ्य में वृद्धि लाता है।

## दाल

स्वस्थ मनुष्य के आहार में दाल का श्रेष्ठ स्थान है, कारण कि यह पौष्टिक पदार्थ है, इसलिये भोजन में दालों का विशेष महत्व है। अच्छी तरह पकी हुई दाल रोटी और चावल के साथ खाई जाती है। चना, अरहर, मूंग, मसूर, उड़द, सोयावीन आदि दालों में मांस से कम प्रोटीन नहीं होता। परन्तु दालों को शरीर के पाचक रस जल्दी नहीं पचा पाते। दालों का सेवन करने के पहले उन्हें अच्छी तरह पानी में पका लेना चाहिये। दाल के गल जाने पर वह सुपाच्य हो जाती है। दाल एक पौष्टिक पदार्थ होते हुये भी रोगियों का आहार नहीं है। दाल अधिक देर में पचती है, इसलिये स्वस्थ मनुष्य ही इसे पचा सकता है।

## रसाहार

सन्तरा, मौसम्बी, नारंगी रस भरी, अनन्नास, या बारह घंटे पानी में भिगोये हुये किशमिश का रस पानी में मिलाकर लेना ही रसाहार कहलाता है। कच्ची तरकारियों का सूप, जैसे गाजर, टमाटर, पालक, खीरा आदि का रस फलों के रस से कम गुणकारी नहीं होता। उबली हुई तरकारी का सूप भी रसाहार में ही आता है, परन्तु उपरोक्त फलों के रसाहार की अपेक्षा कम गुणकारी होता है। दूध को भी रसाहार में रखा जा सकता है। जिन व्यक्तियों को कोई खाद्य पदार्थ जब नहीं पच पाता तो उसे रसाहार का ही सेवन करना चाहिये। पेट और पाकस्थली की अवस्था ठीक न रहने पर दिन में कई बार थोड़ा थोड़ा करके रसाहार ही करना आवश्यक है। उपवास भी रसाहार से ही तोड़ना चाहिये। रोगी की शक्ति बढ़ाने के लिये रसाहार उत्तम खाद्य है।

## फलाहार

स्वास्थ्य-रक्षा के लिये फल के समान संसार में कोई खाद्य नहीं है।

यह दवा और आहार दोनों का काम देता है। रसवाले सभी फल नीबू, संतरा, मौसम्बी, अनन्नास, मीठा नीबू, कागजी नीबू, रसभरी, सेब, नाशपाती, अंगूर, शहतूत, अनार; चेरी; अलूचा; आम; पपीता; अमरूद; लीची; जामुन; शरीफा आदि उत्तम श्रेणी के फल माने जाते हैं। खरबूजा; तरबूज; टमाटर; चीकू आदि भी फल के आहार हैं। कटहल और केला जैसे फल होते हुये भी देर से पचने के कारण फल में इनका विशेष स्थान नहीं है। लेकिन अधिक पका हुआ केला खाने से शीघ्र पचता है और पेचिश रोग में लाभकारी भी है। जिस ऋतु में जो फल पाया जाय वही उस ऋतु में खाना उत्तम है।

## जल

जिस प्रकार प्राण-रक्षा के लिये वायु आवश्यक है उसी प्रकार पानी भी आवश्यक है। शरीर के प्रत्येक तन्तुओं में आवश्यक पदार्थ का संचालन करने के लिये पानी आवश्यक है। जिस प्रकार कुवेरा इत्यादि पानी के पौधों की सेचन क्रिया पानी द्वारा होती है उसी प्रकार शरीर के प्रत्येक तन्तुओं से सम्बन्ध है। पानी अधिक मात्रा में पीने से शरीर के प्रत्येक क्षुद्रतम भागों की धुलाई हो जाती है। पानी पसीना, पेशाब आदि रूपों में शरीर के जहर को बाहर निकाल देता है। पानी पीने का सबसे उत्तम समय है प्रातःकाल सोकर उठने पर। दोपहर में भी पानी पीना चाहिये। यों तो पानी जब भी प्यास लगे तभी पीना आवश्यक है। सुबह पीने से कोष्ठबद्धता दूर हो जाती है। शरीर में लगभग ७० भाग पानी है। खाना खाने के आधे घंटे पहले पानी पीने से पाकस्थली की धुलाई हो जाती है। पाचक शक्ति भी बढ़ती है। कम से कम दिन भर में ३ सेर तक पानी पीना चाहिये।

जुकाम होने पर नीबू के साथ पानी यथेष्ट मात्रा में पीना आवश्यक है इससे शरीर का अधिक मात्रा में विष बाहर निकलता है। अधिकांश रोगों के आक्रमण का वेग एक दो दिन केवल पानी पीकर रहने से ही शमित हो जाता है।

# पंचम अध्याय

## व्यायाम और स्वास्थ्य

नियम-संयम, आहार-विहार पौष्टिक पदार्थ ही स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये पर्याप्त साधन नहीं हैं, इसके साथ-साथ व्यायाम भी आवश्यक है। व्यायाम से हीन व्यक्ति का शरीर केवल एक मांस का लोथड़ा है। अमीरों के वेडौल शरीर होने का मुख्य कारण है व्यायाम का अभाव। प्रत्यक्ष है कि शरीर के जिस अंग से विशेष काम लिया जाता है वह दूसरे की अपेक्षा सुदृढ़, शक्तिशाली और सुडौल हो जाता है। दायें हाथ से अधिक काम लेने से बायें हाथ की अपेक्षा अधिक चुस्त और शक्तिशाली होता है। वे लोग जो कि एक साथ अधिक वजन लेकर पहाड़ी पर चढ़ते हैं या साइकिल जैसी सवारी, जिसमें पांव से अधिक काम लिया जाता है, चलाते हैं, उनके पैर अधिक शक्तिशाली एवं सुदृढ़ होते हैं। हाथ से काम करनेवाले बढ़ई के हाथ अधिक मजबूत होते हैं। इसी प्रकार नियमित व्यायाम करने वाला व्यक्ति स्वस्थ, सुन्दर एवं बलिष्ठ होता है। आलस्य से निर्बल एवं रोगी हो जाते हैं। इसलिये निःसन्देह कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य संबंधी अन्य साधनों की तरह व्यायाम भी आवश्यक है।

व्यायाम मनुष्य ही नहीं सभी जीव-जन्तुओं के लिये आवश्यक है। मनुष्य को छोड़कर अन्य जीव-जन्तुओं को अपने आहार की खोज में या कभी आत्म रक्षा में ही काफी परिश्रम करना पड़ता है। यही उनका व्यायाम है। बच्चा जन्म से ही व्यायाम करता है, रोकर या प्रसन्न मन

से अपने हाथ पांव को हमेशा चलाते रहता है। गाय का सुन्दर बछड़ा मगन होकर छलांगें भरता है, यही उसका व्यायाम है।

व्यायाम करने से समस्त शरीर में रक्त का संचार नियमित हुआ करता है। रक्त का संचालन नियमित रहने पर प्रत्येक अंग को नव-जीवन मिलता रहता है। व्यायाम से जिस प्रकार बाह्य अंग मजबूत एवं सबल होते हैं उसी प्रकार आन्तरिक अंग भी सबल हो जाते हैं। जैसे पाकस्थली, आंत, लीवर, हृदय आदि। ऐसी अवस्था में जो कुछ भी खाया-पीया जाता है सभी आसानी से पच जाता है जिससे जीवन-रक्षक जीवाणु भी शक्तिशाली बनकर बीमारियों के आक्रमण को रोक सकने में समर्थ होते हैं।

संसार के हर देश में भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यायामों की प्रथा है। फिर भी भारतवर्ष व्यायाम में अद्वितीय है। जिनको अपनी जीविका के लिये शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है उन्हें दूसरे अन्य व्यायाम करने की आवश्यकता नहीं। भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है। कृषि करनेवाले को शारीरिक परिश्रम करना ही पड़ता है।

मानसिक काम करनेवाले को भी शारीरिक परिश्रम आवश्यक है। फुटबाल, वाली बाल, कबड्डी, बैडमिन्टन, कुस्ती, हाकी, क्रिकेट, गुल्लीडंडा, टेनिस, तैरना आदि खेलों में से किसी एक से अथवा अधिक से शारीरिक परिश्रम कर लेना चाहिये। उपरोक्त खेलों से शारीरिक परिश्रम तो होता ही है साथ साथ मानसिक शान्ति भी मिलती है। दिमाग शुद्ध और ताजा हो जाता है। खुली हवा में सुबह शाम टहलना एक अच्छा व्यायाम है। जो लोग अधिक दुर्बल, कमजोर हैं उन्हें तो अवश्य सुबह-शाम टहलकर व्यायाम का लाभ उठाना चाहिये। टहलने से स्नायुविक शक्ति बढ़ती है। स्नायु शरीर का प्रधान अंग है।



संसार के सभी महा पुरुषों का मत है कि मानसिक काम करनेवाले

के लिये शारीरिक परिश्रम आवश्यक है। पूज्य बापू गांधीजी जिस प्रकार अपनी प्रार्थना से कभी नहीं चूकते थे उसी प्रकार टहलने से भी। चलने में जवान आदमी भी उनसे पीछे रह जाता था। आज भी सन्त विनोबा भावेजी ने प्रातःकाल भजन करते हुये टहलने का क्रम बना रखा है और समस्त भारतवर्ष का पैदल भ्रमण कर रहें हैं। इसी कारण आज भी इतनी लम्बी आयु में उनका स्वास्थ्य अच्छा है। अखिल भारतीय प्राकृतिक चिकित्सा परिषद के सातवें अधिवेशन के समारोह में सन्तजीने टहलने पर ही व्याख्यान दिया था। अन्त में उन्होंने बताया कि था कि पूर्ण स्वस्थ व्यक्ति वही है जो १०० वर्ष की आयु में पैदल यात्रा कर सके। आज के वैज्ञानिक युग में जब कि गन्तव्य स्थान तक जाने के लिये नाना प्रकार की सवारी रेल, मोटर, साइकिल आदि का साधन है, टहलना आवश्यक है। समयाभाव के कारण शहरी जीवन बितानेवालों को योग आसनों द्वारा व्यायाम की पूर्ति कर लेनी चाहिये। आसनों से पेट एवं स्नायुविक शक्ति में वृद्धि होती है। भिन्न भिन्न आसनों से भिन्न भिन्न अंगों का व्यायाम होता है।

## प्राणायाम

हम लोग जो स्वाभाविक सांस लेते और छोड़ते हैं, उस पर नियंत्रण कर आवश्यकतानुसार श्वास को रोकना और छोड़ना ही प्राणायाम कहा जाता है। इसकी कई विधियां प्रचलित हैं, बैठकर, खड़े होकर, लेटकर, टहलने के समय यहां तक कि पेट खाली रहे एवं हवा शुद्ध रहने पर कभी भी किया जाता है।

प्राणायाम सदैव खुली हवा में करना चाहिये। पर इन सबमें विशिष्ठ प्राणायाम पद्मासन या सिद्धासन पर बैठकर करना है।

प्राणायाम की तीन अवस्थायें होती हैं, पूरक, कुम्भक और रेचक। धीरे-धीरे वायु को नासिका द्वारा ग्रहण करने को पूरक, फेफड़े में

वायु भर कर रोकने को कुम्भक और धीरे धीरे वायु को नासिका बाहर निकालने को रेचक कहते हैं। इन क्रियाओं में क्रमशः एक, और दो का अनुपात रखना चाहिये अर्थात् जितने समय में वायु ग्र कीं जाय उसके चार गुना समय तक फेफड़े में रोककर रखी जाय दुगुने समय में बाहर निकाल दी जाय।

प्राणायाम लेने में हमेशा धीरे धीरे वायु को ग्रहण करने का अभ करना चाहिये। प्राणायाम के समय किसी प्रकार की चिन्ता वि आदि से रहित रहना चाहिये। सर्वदा नाक द्वारा ही प्राणायाम में ख खींचना और छोड़ना चाहिये। प्रकृति ने नाक की रचना हवा लेने छोड़ने के लिये ही की है। नाक में जो बाल रहते हैं वे फिल्टर का करते हैं। वायु में सम्मिलित नाना प्रकार के विषाक्त कणों को बाहर रोक देते हैं। अन्यथा फेफड़े में पहुँच कर हानि पहुँचा देते हैं।

प्राणायाम के पहले शरीर को मालीश द्वारा गर्म कर लेना चाहि या किसी आसन द्वारा। गर्म रहने पर अधिक मात्रा में आक्सीजन आवश्यकता पड़ती है। किन्तु बुखार वाले रोगी को कुछ करने आवश्यकता नहीं, क्योंकि उसका शरीर गर्म रहता ही है।

प्राणायाम से फेफड़े के सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, क्योंकि प्राणा से फेफड़े का व्यायाम हो जाता है।

## आसन

सभी प्रकार के आसन एवं व्यायाम खुली हवा में सुबह शाम खा पेट करने चाहियें। साफ सुथरी समतल भूमि पर जहां शुद्ध वायु अ मात्रा में प्राप्त हो सके, आसन व्यायाम करना चाहिये। कम्बल चटाई बिछाकर आसन करना श्रेष्ठ है। यदि किसी कारणवश घर में आसन करना पड़े तो खिड़की एवं दरवाजे यथासम्भव खुले र

चाहियें। आसन में श्वास-प्रश्वास का भी व्यायाम साथ ही साथ होता रहता है, इसलिये दुर्गन्धपूर्ण कमरे में जहां हवा का आवागमन सुगमता से न हो, नहीं करना चाहिये। इस समय श्वास सदैव नाक से ही लेना चाहिये।

आसन करने के समय शरीर पर लंगोट या कौपीन के सिवाय और कोई वस्त्र नहीं रहना चाहिये। परन्तु शीतकाल में आवश्यकता हो तो एक गंजी पहन सकते हैं।

जिस प्रकार भोजन ग्रहण करते समय शान्त-चित्त एवं प्रसन्न मन की आवश्यकता होती है उसी प्रकार आसन करने में भी प्रसन्न चित्त रहना आवश्यक है। प्रतिदिन निश्चित समय पर ही आसनाभ्यास करने से लाभ होता है अन्यथा नहीं।

आसनाभ्यास के साथ साथ आहार एवं संयम भी आवश्यक हैं। भोजन पौष्टिक एवं सुपाच्य होना चाहिये। ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है। यदि उपरोक्त बातों पर ध्यान न दिया गया तो आसन या व्यायाम से कोई लाभ नहीं हो सकता।

आसनाभ्यास उम्र के अनुसार करना चाहिये। बालक, युवा, वृद्ध स्त्री-पुरुष सभी आसन कर सकते हैं। परन्तु छोटी उम्र के बच्चे एवं अधिक वृद्ध आसन का लाभ टहलने से प्राप्त कर सकते हैं। आठ वर्ष का बालक आसन खुशी से ले सकता है। स्त्रियों को मासिक धर्म में पांच दिन एवं गर्भावस्था में आसन नहीं लेना चाहिये। सभी तीव्र रोगों में आसनाभ्यास करना निषिद्ध है।

क्रमशः आसनाभ्यास का समय बढ़ा लेना चाहिये। पहले दिन ही अधिक प्रयोग से कुछ भी कष्ट हो सकता है। धीरे धीरे समय बढ़ाते जाने पर इसकी सम्भावना नहीं रहती। आसन करते समय इतना ध्यान में रखना चाहिये जब भी थकावट अनुभव होने लगे आसनाभ्यास बन्द कर

शवासन करके थकावट दूर कर लेनी चाहिये। आसनाभ्यास शक्ति से परे भी हानिकारक है। अति सर्वदा वर्जित है।
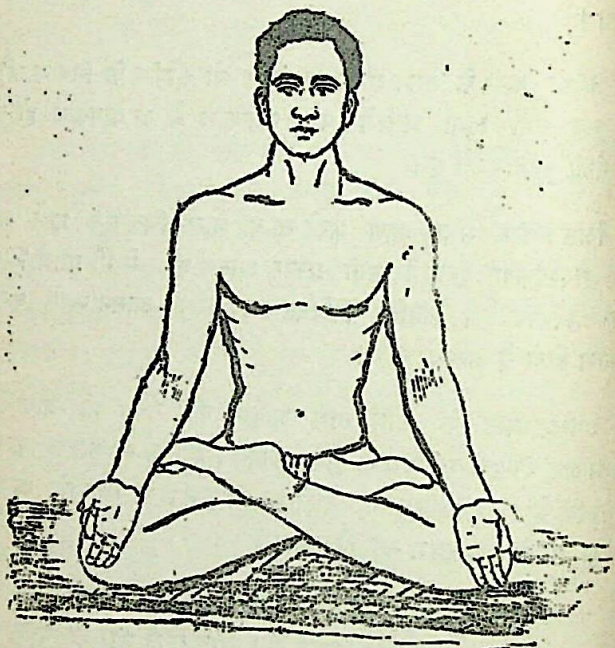
पद्मासन

**पद्मासनः—** पद्मासन पर ठीक प्रकार से बैठने की विधि इस प्रकार है—जहां पर आसन लगाकर बैठना हो वहां पर दोनों पावों को आगे की ओर फैला कर दाहिने पांव को घुटने से थोड़ा मोड़कर उस की एड़ी को बायें हाथ से पकड़ें और पंजे को दाहिने हाथ से पकड़ कर बायीं जंघा पर रखें फिर बायें पैर को घुटने से थोड़ा मोड़कर उसकी एड़ी को दाहिने हाथ से पकड़े और पंजे को बायें हाथ से पकड़ कर दाहिनी जांघ पर रखें। इस प्रकार पद्मासन लगाने में प्रारम्भ में कष्ट नहीं के बराबर

होता है। मेरुदण्ड सीधा रखना आवश्यक है। प्रत्येक दिन आसन लेने से पूर्व पद्मासन लेकर फिर दूसरा आसन क्रमशः आरम्भ करना चाहिये। इसी आसन की अवस्था में प्राणायाम भी करना हितकर है।

पद्मासन के अभ्यास से सिद्धासन के सभी लाभ प्राप्त होते ही हैं, साथ ही अन्य अनेकशः लाभ मिलते हैं। जैसे कि नाभी के अगल-बगल या कन्धस्थान में सूर्य और चन्द्र नाड़ी का जो स्थान है, उस पर पैरों की एड़ियों का दबाव पड़ता है। इस दबाव से सूर्य और चन्द्र नाड़ी का वायु-प्रवाह बन्द हो जाता है और सुषुम्ना नाड़ी चलने लगती है। सुषुम्ना नाड़ी के चालू होने से प्राणायाम के समय में मन सात्विक भावों में प्रविष्ट हो जाता है और कुम्भक का समय बढ़ जाता है। प्राणायाम के प्रभाव से शरीर और मेरुदण्ड अनायास ही सीधे और खिंचे हुये रहते हैं। त्राटक के समय, पूजा-पाठ के समय, श्रवण, मनन और निदिध्यासन के समय, व्याख्यान के समय तथा भोजन के समय में पद्मासन पर बैठ सकते हैं।

**स्थूल शरीरवाले स्त्री-पुरुषों का कर्तव्यः—** जिन स्त्री-पुरुषों का शरीर अधिक स्थूल है, उनकी जानु अधिक मोटी होने से सम्भवतः पद्मासन पर बैठते समय उनके पैरों में रक्ताभिसरण कम हो और फलस्वरूप पैर के दबे हुये स्थान पर शून्यता का और चींटियों के रेंगने जैसा भान होगा। कुछ लोगों के घुटनों में कुछ वेदना होने की भी सम्भावना है। परन्तु अभ्यास के उत्तरोत्तर बढ़ते जाने पर उपर्युक्त प्रतिकूलतायें धीरे-धीरे दूर हो जायेंगी और पैरों की अधिक स्थूलता भी कम होकर उनमें स्फूर्ति का संचार होगा।

**भुजंगासनः—** सांप जिस तरह फण उठाता है ठीक उसी प्रकार इसको भी करना पड़ता है, इसलिये इसको भुजंगासन कहते हैं। छाती के बल लेटकर दोनों हाथों को दोनों स्तनों की रेखा के समानान्तर रख कर धीरे धीरे नाभी के ऊपर का भाग ऊपर उठाते हुये सिर को पीछे
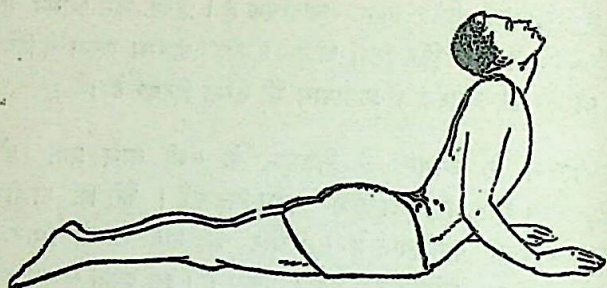
भुजंगासन

की ओर करने से यह आसन पूर्ण होता है। उठे हुये शरीर का भार दोनों हाथों पर कम रख कर धीरे धीरे मेरुदण्ड पीछे की ओर मोड़ना चाहिये। यह आसन हर बार दस से लेकर पन्द्रह सेकन्ड तक करना चाहिये और प्रतिदिन तीन से पांच बार करना यथेष्ट होता है। इस आसन को करते समय श्वास का क्रम स्वाभाविक रखना आवश्यक है। इसके अभ्यास से मेरुदण्ड का कड़ापन दूर हो जाता है और लचक आ जाती है। मेरुदण्ड की लचक पर ही मनुष्य के यौवन और वृद्धावस्था निर्भर करती हैं क्योंकि मेरुदण्ड के रास्ते ही शक्ति प्रवाहित होती है। विभिन्न स्त्री-रोगों में यह बड़ा ही उपकारी है। गर्भाशय, डिम्बकोष फिर से स्वस्थ बनाने एवं मासिक धर्म में बड़ा ही लाभ पहुँचाता है।

**शलभासनः—** छाती के बल लेटकर, दोनों हाथ शरीर के दोनों ओर मुट्ठी बन्दकर एवं ऊर्ध्वमुखी हालत में रखकर इसके बाद निःश्वास लेकर तथा कुम्भक करके दोनों पैरों को सीधा करके यथा सम्भव पीछे की ओर ऊपर उठाना चाहिये। इस प्रकार जबतक कुम्भक करके रखा जा सके तब तक रखकर पांव नीचे धीरे धीरे उतार लेने चाहियें और धीरे धीरे श्वास छोड़ देनी चाहिये। एक से तीन बार तक यह आसन किया जा सकता है। भुजंगासन से शरीर के ऊपरी भाग का व्यायाम होता है उसी के विपरीत शलभासन से निम्न अर्धशरीर का व्यायाम
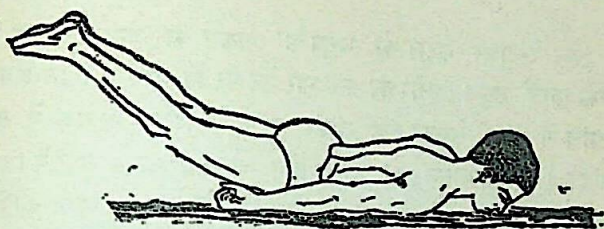
शलभासन

होता है। इस आसन के द्वारा कोष्ठ शुद्ध होता है। यकृत (लीवर) मूत्रयन्त्र, निम्नमेरुदण्ड आदि सबल हो उठते हैं। इसलिये नियमित यह आसन करने से कमर-दर्द, साइटिका, वायुफुल्लता आदि रोगों में लाभ होता है। परन्तु हृदय की दुर्बल अवस्था में कभी भी यह आसन नहीं करना चाहिये।

धनुरासन

**धनुरासन:**— पेट के बल लेटकर दोनों हाथों से दोनों पांव की एड़ी पकड़कर एक तरफ से सिर, गर्दन व छाती और दूसरी तरफ से जंघाओं

को ऊपर उठाकर शरीर को धनुष के आकार का बनाना पड़ता है। इसको करते समय शरीर का सब भार पेट पर ही रहता है। इस अवस्था में पांच से बीस सेकण्ड तक रहकर शरीर को प्रथम अवस्था में लाना चाहिये। इस आसन को दो से तीन बार तक करना चाहिये। इससे मेरुदण्ड सबल होता है, कब्ज दूर होता है और पेट को सबल बनाने में यह श्रेष्ठ आसन है। स्नायुविक दुर्बलता अजीर्ण, मधुमेह रोग की यह श्रेष्ठ चिकित्सा है। पेट की चर्बी को भी दूर करता है।
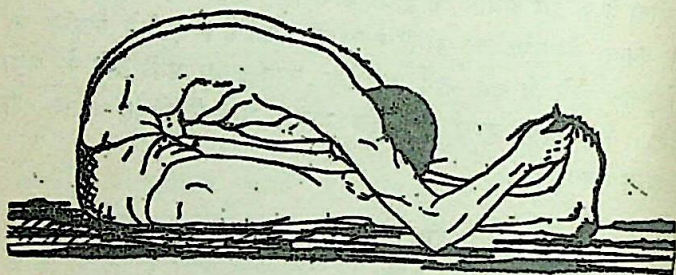
पश्चिमोत्तानासन

**पश्चिमोत्तानासनः—** इसके द्वारा शरीर के पिछले भागका व्यायाम होता है। जमीन पर बैठकर सामने की ओर पैर सीधे फैलाकर दोनों हाथों से पैर के पंजे पकड़कर श्वास अन्दर खींचकर नासिका के अग्रभाग को घुटनों मे लगाना चाहिये, इसमें ध्यान रहना चाहिये कि पैर धरती से चिपके रहें। दोनों हाथों की कुहनियां जमीन से लगी रहें। दो से पांच मिनट तक करके फिर श्वास लेते हुये पूर्वावस्था में आ जाना चाहिये।

पेट और मेरुदण्ड के व्यायाम का यह श्रेष्ठ आसन है। अजीर्ण, कोष्ठबद्धता, बवासीर, स्वप्नदोष, जननेन्द्रिय की दुर्बलता आदि रोग इससे नष्ट हो जाते हैं। जठराग्नि भी बढ़ती है।
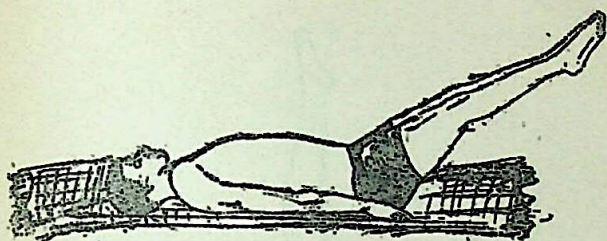
उत्थानपादासन

**उत्थानपादासनः—** सब स्नायुओं को ढीला करके लेट जाना चाहिये। पावों को सीधा रख कर धीरे धीरे ऊपर उठाना चाहिये। लगभग जमीन से एक हाथ ऊपर पांव उठ जाने पर अपनी शक्ति के अनुसार कुछ देर तक स्थिर रखना चाहिये। इससे आंतों पर बल पड़ता है और वे सबल होती हैं। कब्जियत, बदहजमी आदि पेट के रोग दूर हो जाते हैं।

**सर्वांगासनः—** जमीन पर पीठ बल चित लेट कर दोनों पैरों को धीरे धीरे इस प्रकार ऊपर उठाना चाहिये कि गले के साथ धड़ समकोण बनाता हुआ खड़ा हो जाय, पैर जुड़े रहें। हाथों को जमीन पर या सहारे के लिये कमर पर लगा लेना चाहिये। प्रतिदिन १० मिनट तक अभ्यास करना चाहिये। इससे तिल्ली और जिगर ठीक होते हैं और भूख भी बढ़ती है। इस समय श्वास-प्रश्वास स्वाभाविक होना चाहिये। इसके अलावा यह स्नायुओं को नया करता है। इसलिये इस आसन से शरीर की स्नायविक उत्तेजना दूर हो जाती है। शरीर की सब प्रकार से क्षमता बढ़ जाती है एवं गिरे हुये शरीर में भी नवजीवन आ जाता है। यह आसन करने से स्त्रियों के मासिक धर्म संबंधी सभी रोग दूर हो जाते हैं। मिरगी रोग में यह एक प्रभावकारी आरोग्य विधि है। इस आसन को लेने से गल-ग्रन्थि से जो रस निकलता है वह खून के श्वेत कणों को बढ़ाता है। जिससे विभिन्न संक्रामक बीमारियों से बचने
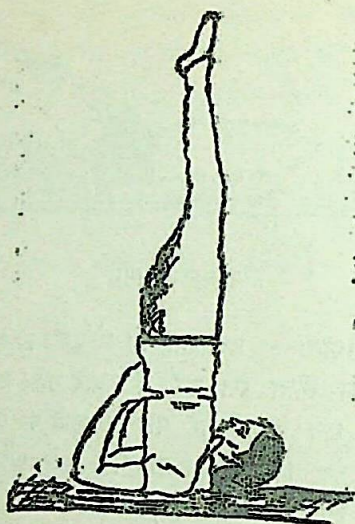
सर्वांगासन

की सम्भावना रहती है। गर्भाशय के स्थान से हट जाने एवं हार्निया रोग में विशेष लाभ होता है। इस आसन के बाद ही मत्स्यासन करना चाहिये।

**शीर्षासनः—** इस आसन में सिर के बल खड़ा होना पड़ता है, प्रारम्भ में दोनों हाथों का जूड़ा बनाकर शिखा स्थान पर लगाते हुये शिर को जमीन से लगा कर, घुटनों के बल तथा कुहनियों समेत भुजाओं का सम्बल प्राप्त करने की स्थिति में आकर, पैर के पंजों और सिर के बीच अर्धवृत्ताकार स्थिति नितम्ब और धड़ को ऊपर करने से धीरे धीरे लाकर पैरों को ऊपर उठाने का प्रयत्न किसी योग्य निरीक्षक की देखरेख में करना चाहिये।



शरीर में रक्त का संचालन स्वाभाविक रीति से ऊपर से नीचे की
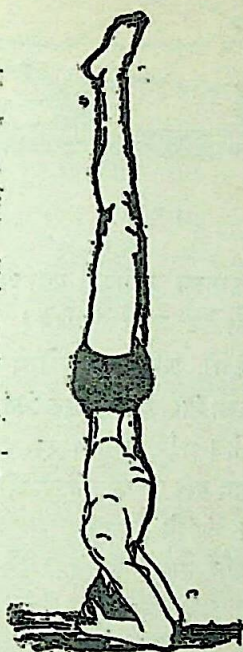
शीर्षासन

ओर होता है, किन्तु शीर्षासन से खून की प्राकृतिक गति में परिवर्तन हो जाता है, वह नीचे से ऊपर की ओर अर्थात् पैरों से मस्तक की ओर प्रवाहित होने लगता है। इस क्रिया में खून के सभी विकार दूर हो जाते हैं। स्वप्नदोष की शिकायत दूर हो जाती है। दस्त साफ होने लगता है, नेत्रज्योति बढ़ती है शरीर में स्फूर्ति आती है। पांच मिनट से लेकर आधा घंटा तक अभ्यास हो जाने पर यह आसन किया जा सकता है। खाज, फोड़ा, फुन्सी, दाद, अनिद्रा, मस्तिष्क की गरमी, हथेली एवं तलवे की जलन शान्त हो जाती है। शरीर और चेहरे पर तेज छलक उठता है। पं. जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्म-कथा में इस आसन की भूरि भूरि प्रशंसा की है।
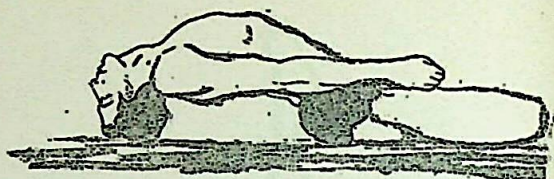
मत्स्यासन

**मत्स्यासनः—** पद्मासन लगाकर यह आसन किया जाता है। पहले इस हालत में चित लेट जाना चाहिये। फिर दोनों कुहनियों के बलपर छाती और पेट को ऊपर उठाकर मेरुदण्ड को पुल का रूप दे देना चाहिये। एक तरफ सिर दूसरी तरफ नितंब के ऊपर ही समस्त शरीर का भार रहता है। गर्दन को यथा सम्भव पीछे की ओर ही टेढ़ा रखना चाहिये। इसके बाद दांये पैर का अंगुठा और बांये हाथ से दांये पैर का अंगुठा पकड़ना चाहिये। आसन से उतरते समय कुहनी पर भार देकर शरीर को नीचे लाना चाहिये। इस आसन से मांस पेशी, गलग्रन्थि विशेष रूप से पुष्टि पाती हैं। शरीर की सृजन शक्ति भी बढ़ती है।
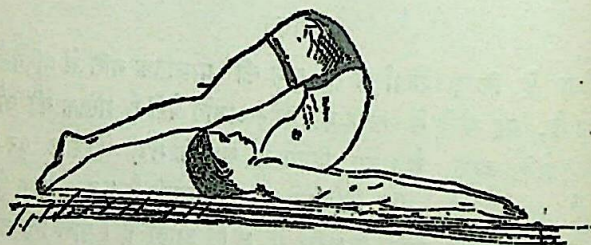
हलासन

**हलासनः—** पीठ के बल चित लेटकर यह आसन करना पड़ता है। दोनों हाथ दोनों जांघों की बगल में रखकर उसके बाद दोनों पैरों को सीधा करके, एवं हाथों को पूर्ववत् रखकर धीरे धीरे ऊपर उठाना

चाहिये। फिर सिर के पीछे ले जाकर जमीन से स्पर्श करना चाहिये। इस समय शरीर का आकार हल की तरह हो जाता है इसी कारण इसको हलासन कहा जाता है। यह एक साथ तीन बार करना चाहिये। मेरुदण्ड को सबल बनाने के लिये एवं कोष्ठबद्धता, मधुमेह इत्यादि रोगों से छुटकारा पाने के लिये हितकर है।
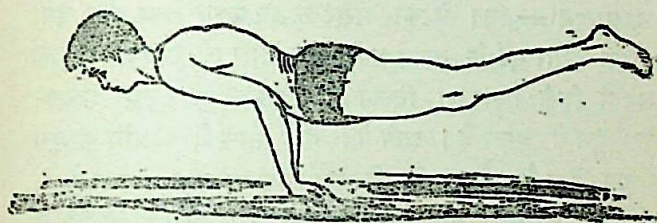
मयुरासन

**मयूरासनः—** घुटने के ऊपर बैठ कर हथेलियों को जमीन पर मिलाकर इस प्रकार रखें कि कुहनियां मिलकर रहें और हथेलियों का रुख पैरों की ओर हो फिर कुहनियों पर नाभि टिकाकर सिर और पैरों को दोनों ओर से ऊपर उठाकर समरेखा में स्थित करना चाहिये। इस आसन के करने से शरीर की स्थिति मयूर जैसी हो जाती है इसीलिये इसे मयूरासन कहा जाता है। इसे एक बार में तीन चार बार करना चाहिये और प्रति बार ३० सेकण्ड से १ मिनट तक रोककर करना चाहिये। पहले इसे किसी तख्ते या खाट के सहारे करने से अभ्यास शीघ्र हो जाता है। मधुमेह रोग का यह सर्वोपयोगी इलाज है। कब्ज, किडनी, अपच, लीवर आदि की कमजोरी में यह बहुत लाभकारी आसन है।

**पवन मुक्तासनः—** चित लेटकर दोनों पांव सटाकर दोनों घुटनों को लाकर छाती से मिलाना पड़ता है। इसके बाद दोनों हाथों से दोनों पांव कसकर पकड़कर छाती पर लगाकर दबाने से यह आसन किया जाता है। पेट में वायु जमा होने पर यह आसन करने से वायु तुरन्त



बाहर निकल जाती है।
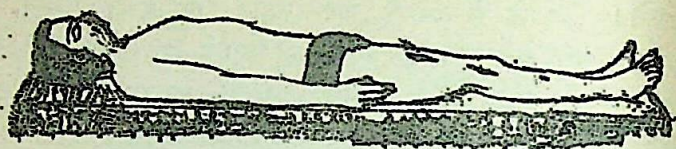
शवासन

**शवासनः—** चित लेटकर शरीर को इस प्रकार ढीला छोड़ देना चाहिये कि शरीर मुर्दे के समान प्रतीत हो। शरीर को एकदम शिथिल कर मन में किसी प्रकार का चिन्तन नहीं लाना चाहिये। तभी शवासन का पूरा लाभ हो सकता है। इससे देह थोड़े समय में विश्राम का पूरा लाभ उठा लेता है और शरीर की स्नायुविक उत्तेजना क्षणभर में दूर हो जाती है। शरीर को सबल बनाने के लिये सभी आसन कर लेने के बाद शवासन लेना आवश्यक है। शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम करने के बाद शवासन अवश्य लेना चाहिये।

उड्डीयान
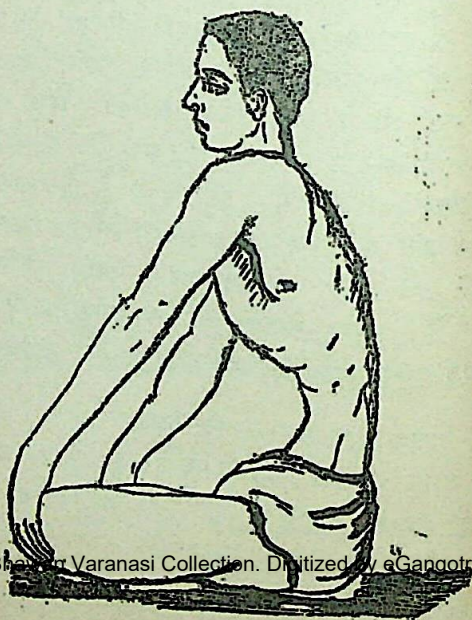
**उड्डीयानः—** इसके अभ्यास करने हेतु दोनों पैरों के बीच डेढ़ फुट का अन्तर रखकर दोनों घुटनों के ऊपर जांघ पर दोनों हाथों को टिकाकर दोनों पर बल देते हुये श्वांस को बाहर निकालते हुये पेडू के भाग को हृदय की ओर ऊपर झटके से ले जाने का यत्न करना चाहिये। इसका अभ्यास हो जाने पर पेट मेरुदण्ड से जा मिलता है। इसे पद्मासन में बैठकर या थोड़ा झुककर भी किया जाता है। कोष्ठबद्धता, अजीर्ण, अपेंडिसाटिस, हार्निया, स्वप्नदोष, स्त्रियों के विभिन्न रोगों में यह बहुत गुणकारी आसन है। नियमित इसका अभ्यास करने से बुढ़ापा दूर भाग जाता है।

**नौलीः—** उड्डीयान की स्थिति में उड्डीयान करके दाहिने हाथ को ढीला करने से बामनौली हो जायगी और बायें हाथ को ढीला करने से दक्षिण नौली हो जायगी इस प्रकार दक्षिण बामनौली व मध्य नौली का अभ्यास कर लेने पर फिर पेट कीं मांसपेशियों को जैसा चाहें दक्षिण बाम वर्ती दिशाओं में नचा सकते हैं। इसे एक साथ चार पांच बार करना चाहिये। जैसे उड्डीयान बैठकर या खड़े होकर किया जा सकता है वैसे ही नौली भी। इसका लाभ उड्डीयान के समान है।

## सूर्य–नमस्कार का महत्व–विधि

सूर्य नमस्कार का यथार्थ अर्थ है सूर्य–भगवान् को नमन–नमस्कार करना। जिन लोगों में धार्मिक भावना नहीं है, उन्हें भी सूर्य भगवान् के विषय में अश्रद्धा नहीं रखनी चाहिये। वैज्ञानिक तत्व वेत्ता भी सूर्य की शक्ति का उपयोग अधिकाधिक रूप में कर रहे हैं। प्रकाश, उष्णता, तेजस्विता, दिव्यता, गतिविधि का स्रोत, परिवर्तन का अभिनव स्वरूप आदि अनेक रूप–रंग सूर्य भगवान् में विद्यमान हैं। यानी अनजाने समग्र जगत के धार्मिक ग्रंथों में भगवान् भास्कर की महिमा स्तोत्रों द्वारा गाई गई है और सूर्य के महत्व तथा उपलब्ध लाभों का वर्णन प्रायः

सर्वत्र पाया जाता है। प्रातःकाल सन्ध्या वंदन के पश्चात् सूर्य भगवान् को अर्घ्य समर्पण करना पड़ता है। मन्त्रोच्चार के समय अखण्ड प्रकाश और अखण्ड शक्ति के स्रोत भगवान् भास्कर की महती महिमा का गान पवित्र स्तुतियों द्वारा किया जाता है। **ओ३म् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।** यजु. अध्याय ३२ मन्त्र १४

अर्थात् स्वर्ग, मृत्यु और पाताल के अधिष्टाता, उत्पत्ति, स्थिति और नाश के मूलाधार अ–उ–म के ऊपर अर्धमात्रा रूपी माया के उस पार मध्य बिन्दु रूपी परमात्मा के मूल स्वरुप का स्मरण करते हुये अन्धकार मूलक अज्ञान को नष्ट करने वाला, साकार रूप में तेजपुंज भगवान् सूर्य सबको प्रकाशमयी शक्ति प्रदान कर रहे हैं।

**ओ३म् उदुत्यं जात वेद सं देवं वहन्ति केतवः दृशे विश्वाय सूर्यम्।** यजु. अ. ३३, मन्त्र ४२

अर्थात् भगवान् सूर्य की रश्मियां अखिल विश्व में फैल रही हैं। समग्र संसार में सूर्य-किरण की अमोघ शक्ति सर्वत्र विद्यमान है—बिखर रही है। अष्ट दिशाओं में सूर्य भगवान् की सत्ता व्याप्त है।

**ओ३म् चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुण स्याग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्ष सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।** यजुर्वेद अ. ७, मन्त्र ४२

अर्थात् आंखों का तेज सूर्य की शक्ति से ही देदीप्यमान् हो रहा है। पृथ्वी, अन्तरिक्ष, जल आदि पंच महाभूतों में भगवान् की सत्ता अक्षुण्ण है और वे इन तत्वों में निवास करते हैं।

उपर्युक्त मन्त्र से पता चलता है कि अन्दर-बाहर ऊपर-नीचे सर्वत्र सूर्य भगवान् की महान् शक्ति प्राणिमात्र के जीवन की आधार शिला

है। धार्मिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो भगवान् भास्कर प्राणिमात्र के प्राण समान हैं। प्रत्येक प्राणी के शरीर में सूर्यदेव तैजसीय अग्नि तत्व के रूप में विद्यमान हैं—सब में उनकी तैजस धारा स्पष्ट रूप में प्रवाहित हो रही है—सर्वत्र उनका अस्तित्व लक्षित होता है। भगवान् भास्कर का पूजन, अर्चन, वन्दन, नाम–जपोच्चारण करके मानव का पारमार्थिक मार्ग सुलभ और परम श्रेयस्कर बन जाता है।

अतः नित्य प्रति प्रातःकाल नियमानुसार सूर्योदय के समय में भगवान् भास्कर के विभिन्न नामों का उच्चारण करते हुये, हृदय में अपरिमित श्रद्धा भावना और अन्तःकरण को प्रेम पुलकित बनाकर सूर्योपासना करने से शरीर के अंग प्रत्यंग में भगवान् दिवाकर की रश्मियां प्रविष्ट होकर समग्र शरीर को देदीप्यमान बना देती हैं। अतः अन्तःकरण को श्रद्धा भावना से परिप्लावित बना कर सूर्य भगवान् की आराधना अवश्य करनी चाहिये। सूर्य भगवान् के अनेकशः नाम हैं इनमें १२ नाम मुख्य हैं वे इस प्रकार हैं— १. मित्र, २. रवि, ३. सूर्य, ४. भानु, ५. खग ६. पूषन्, ७. हिरण्यगर्भ, ८. मरीचि, ९. आदित्य, १०. सविता, ११. अर्क, १२. भास्कर।

## नामों के नमस्कार मन्त्र

ॐ मित्राय नमः, ॐ रवये नमः, ॐ सूर्याय नमः, ॐ भानवे नमः, ॐ खगाय नमः, ॐ पूष्णवे नमः, ॐ हिरण्य गर्भाय नमः, ॐ मरीचये नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ सवित्रे नमः, ॐ अर्काय नमः, ॐ भास्कराय नमः। भगवान् के इन्हीं नामों का जप चिन्तन, मनन करते हुये, नित्य प्रति सूर्य नमस्कार करना चाहिये। मानसिक तथा शारीरिक व्याधियों से सदैव सुरक्षित रहने के लिये यह एक सरल और सफल उपाय है।

## शरीर पर सूर्य नमस्कार का प्रभाव

भगवान् भास्कर प्रत्यक्ष देव हैं। वे तेजपुंज और विश्वात्मा हैं— "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च"। दिवाकर की दिव्य किरणों का स्पर्श पाकर समग्र चैतन्य सृष्टि प्राणवान् हो उठती है। मानव के स्थूल और सूक्ष्म शरीर भी इससे प्रभावित होते हैं और अंग-प्रत्यंग तेज और चैतन्य धारा से स्नान कर तेजोमय और चैतन्यशील बन जाते हैं। रात में ओस बिन्दुओं से नहाई हुई प्रकृति प्रातःकाल सूर्य-किरणों से और भी अधिक लहलहा उठती है। इसी प्रकार मानव की विश्राम अर्जित नवीन शक्ति प्रातःकाल भास्कर के तेजस्वी प्रभाव से अनुप्राणित हो दूने वेग से कार्यशील होने को उत्साहित हो उठती है। सूर्य-नमस्कार का यही सर्वत्र व्यापी प्रभाव है। सूर्य-नमस्कार की जो शास्त्रीय व्यायाम पद्धति बताई गई है, उससे शरीर के अंग-प्रत्यंग में नवीन शक्ति का संचार होता है। इस सूर्य व्यायाम के समय श्वासोच्छ्वास की क्रिया भी अनायास होती रहती है, फलतः प्राणशक्ति की अविरल धारा प्रवाहित होती है। अन्य विविध व्यायामों की अपेक्षा सूर्य-नमस्कार का व्यायाम इसलिये महत्वपूर्ण है कि पाचक-प्रणाली को बलवान् और कार्यकुशल बनाता है और आंत तथा मूत्ररोगों का तनिक भी भय नहीं रहता। छोटी-बड़ी आंतों, फेफड़ों, तथा ज्ञानतन्तुओं पर इस व्यायाम का बड़ा ही शुभ प्रभाव होता है और वे विकासोन्मुख रहते हैं। शरीर में विजातीय द्रव्यों ( मल ) का संचय कभी नहीं होने पाता। यह व्यायाम प्रकृति की निरन्तर परिवर्तनशीलता का सामना करने के लिये साधक को समर्थ बनाता है और शरदी, गरमी, वर्षा आदि ऋतुजन्य विकारों का उस पर कोई प्रभाव नहीं होता। वह किसी भी वातावरण में आक्रमणकारी रोगों के प्रतिरोध के लिये तैयार रहता है और वे परास्त होकर भाग खड़े होते हैं। सूर्य नमस्कार के व्यायाम की जो १२ कलाएं बताई गई हैं, वे सभी शरीर के विभिन्न अंगों पर अपना प्रभाव डालती हैं, दण्ड बैठक के व्यायाम की अपेक्षा सूर्य दण्डवत् व्यायाम को शारीरिक सौन्दर्य और सौष्ठव के लिये हमारे पूर्वजों और जर्मनी के वर्तमान व्यायाम विदों ने सबसे प्रथम स्थान

दिया है। सूर्य नमस्कार से शरीरकी निरर्थक चरबी कम हो जाती है और नई चरबी का निर्मा।ण बन्द हो जाता है। इससे आमाशय, लीवर, हृदय, फेफड़े आरोग्यमय तथा कार्यदक्ष बनते हैं। मूत्ररोग दूर होते हैं और स्थानच्युत तथा टेढा गर्भाशय यथास्थान सीधा हो जाता है। अनियमित रजोदर्शन, शीघ्रपतन, स्वप्नदोष और प्रदर तथा कब्धन आदि रोग सदा के लिये विदाई ले लेते हैं। सूर्य-नमस्कार से नेत्रों को भी आवश्यक व्यायाम मिल जाता है। इस व्यायाम से स्नायु-विकास का उचित अवकाश मिलता है और ऊंचाई बढ़ाने में यह उपयोगी सिद्ध हुआ है।

इस प्रकार १२ अवस्थाओं के सूर्य-नमस्कार करनेवाले को आरोग्य और मानव जीवन का सम्पूर्ण आनन्द बिना एक पाई खर्च किये मिलता है १२ प्रकार की सूर्य-नमस्कार अवस्थाएं इस प्रकार हैं :—

### प्रथम प्रकार

सीधे खड़े हो जायें। पीठ, गला और शिर समग्र शरीर को सीधा तान कर रखें। अगल बगल की ओर न देखकर दृष्टि नाक के अग्रभाग पर स्थिर रखें और शान्त चित्त से मन को वश में रखकर दोनों पैरों के साथ घुटने से घुटना मिलाकर कन्धे से हाथ सीधे लटकते रहें। मुट्ठियां खुली रहें और छाती बाहर निकाल कर एक बहादुर की तरह खड़े रहें। इस बात का विशेष ध्यान रहे कि उस समय जहां खड़े हैं, वहीं के वहीं नमस्कार के पूर्ण होने तक पैरों को रखना, अर्थात् ११ वीं अवस्था में जब पैर को पीछे से लाकर इस स्थान पर रखें, उस समय इसी स्थान पर रखें, तनिक भी पीछे न रह जायें। इस प्रकार प्रसन्न चिन्तन से परमात्मा का ध्यान करते रहें। प्रथम क्रिया (आसन) को दक्षासन कहे
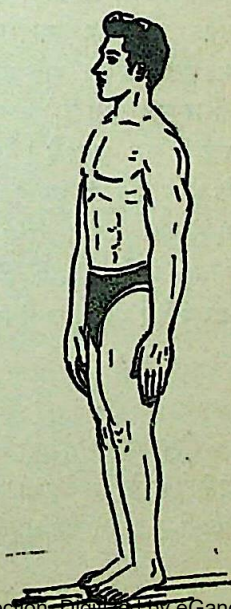
जाता है, जिसका अर्थ है सीधे खड़े रहना, इसीलिये पहले सेना में सावधान (एटेन्शन) का आदेश दिया जाता है। सूर्य-नमस्कार का लाभालाभ बहुत कुछ श्रद्धा या विश्वास पर आधार रखता है। गीता में भगवान् ने कहा है—

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धाभवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥

अर्थात् सर्वत्र श्रद्धा ही सर्वोपरि है। यहां तक की मनुष्य श्रद्धामय है। श्रद्धा के अनुसार ही मानव का निर्माण होता है। मनुष्य जैसा बनना चाहता है, वैसा बन सकता है, लेकिन एतदर्थ उसको तदनुरूप अपने विचार निर्धारित करने पड़ते हैं। मानव का निर्माण श्रद्धा से हुआ है, ऐसी दशा में यदि हम उपर्युक्त दक्षासन अपनी भावना को श्रद्धापूर्वक केन्द्रित करेंगे तो अवश्य ही हमें समग्र जगत् आत्मीय प्रतीत होगा और हमारा मन पवित्र तथा श्रद्धावान् बनेगा। हमारे सभी मानसिक विकार नष्ट हो जायेंगे। खुले शरीर खड़े होने से उदयोन्मुख सूर्य का प्रकाश शरीर पर पड़ता है, फलतः चर्मरोग दूर होते हैं तथा शरीर तेजस्वी और रक्ताभ बन जाता है। पैरों में नवीन शक्ति का संचार होता है दृष्टि नाक के अग्र भाग पर जमाये रखने से मनोनिग्रह भी सहज ही हो जाता है। मुखमण्डल तेजस्वी होकर नैसर्गिक सौन्दर्य से प्रफुल्ल हो उठता है। विद्यार्थियों के स्वास्थ्य और व्यक्तित्व प्रभावशाली बनाने का यह सरल उपाय है। यह क्रिया चैत्र मास में की जाती है।

## द्वितीय प्रकार

इस द्वितीय अवस्था में सीधे खड़े हो जायें। दोनों हाथों को जोड़कर प्राणिमात्र के अन्तरात्मा को तथा भगवान् भास्कर को नमस्कार करना पड़ता है। भगवान् श्रीकृष्णने गीता में कहा है :—



योगिनामपि सर्वेषां, मद्गतेनान्तरात्मना

**श्रद्धावान् भजते योमां स मे युक्ततमोमतः**

सभी प्रकार के योगियों ( मनुष्यों ) में जो योगी श्रद्धापूर्वक हमारा भजन पूजन करता तथा शुद्धांतःकरण से प्रार्थना—स्तुति करता है, वह अन्य लोगों की तुलना में विशेष शुद्धचिन्तन और आध्यात्मिक योगी के समान उत्तम अन्तरंग साधन सम्पन्न बन जाता है। उसे मैं सर्वोत्तम योगी मानता हूं। श्रुति का कथन है कि इस प्रकार के आध्यात्मिक तत्वविद योगी का पुनर्जन्म नहीं होता, अर्थात् वह अकाल मृत्यु रोग की विभीषिकाओं से बचा रहता है इसी प्रकार हमें यहां सूर्य मन्त्र मुंह से न बोलकर मन में ही जप करना चाहिये।
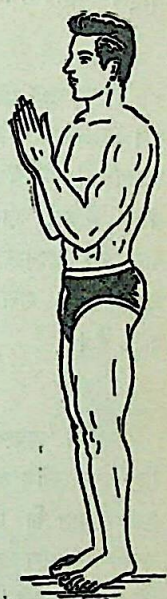
**लाभ**—श्वास के साथ मन को गले में केन्द्रित करने से प्रार्थना एकाग्रता की शक्ति बढ़ती है और अधिकांश मानसिक तथा शारीरिक रोग मिटकर गले के रोगों से भी छुटकारा मिलता है। स्वर सुन्दर तथा मधुर होता है। शरीर तथा मन निर्मल बन जाते हैं। शरीर—आत्मा के मन्दिर में नया बल, उत्साह, शौर्य और शुद्ध वीर्य की वृद्धि होकर नवजीवन प्राप्त होता है। वक्तृत्व शक्ति विकसित होती है। यह क्रिया वैशाख मास में प्रतिदिन करनी चाहिये। क्योंकि वैशाख मास का सूर्य सूक्ष्म जगत् को तो पोषण प्रदान करता ही है, साथ ही स्थूल जगत् को विशेष कर पुरुष और वृषभ ( बैल ) के लिये यह मास अत्यन्त पोषणदाता होने से इस मास में वृषभों की शक्ति बढ़ती है। वैशाख की रातों में वायुवेग अधिक होने से पुरुषों के शरीर में रक्त-संचालन क्रिया मंद गति से चलती है, अतः इस आसन करने से शरीर में रक्त की भ्रमण-क्रिया उचित गति से चलने लगती है। यदि पथ्य से रहा जाय

तो बिना औषधि के ही रोग मिट जाते हैं और अपथ्य अर्थात् अनुचित आहार-विहार रोगों को निर्मित करते हैं।

### ग्रीष्म ऋतु का गुण

ग्रीष्म ऋतु सूखी होती है, फलतः पदार्थों में तीक्ष्णता उत्पन्न करती है। इसमें कफ का नाश तथा पित्त की वृद्धि होती है। पसीने की रुकावट से अपच होने की सम्भावना है। पसीने के साथ अनेक विकार बाहर निकल आते हैं, फलतः शरीर शुद्ध होता है। पसीने को रोकना रोग और डाक्टर को निमन्त्रण देने के समान है। पसीने को पोंछ देना चाहिये और शरीर में सूखने देना न चाहिये। इस क्रिया का महीना ज्येष्ठ है।

### तृतीय प्रकार

तृतीय अवस्था को पर्वतासन कहते हैं और द्वितीय से तृतीय अवस्था में आने के लिये नासा-पुटों द्वारा श्वास को खींचकर कन्धों तक भर लें चित्र में बताये अनुसार हाथ ऊंचे कर समग्र शरीर को तान दों और खुली आंखों से आकाश की ओर देखें। पीछे की ओर जितना अधिक मुड़ सकते हों, उतना मुड़ें। छाती जहांतक फुला सकें, फुलायें और श्वास को बाहर निकाल दें। इस क्रिया के अभ्यास से हमारे शरीर की संचालिकाएं—दोनों फेफड़ों के बीच अवस्थित अन्न-नलिका और श्वासनलिका व कन्धों को भी पोषण प्राप्त होता है, तद्गत रोग दूर होते हैं और पोषण प्राप्त होने के पश्चात् ठीक प्रकार से इस क्रिया को निरन्तर करता रहे तो मानव आजीवन किसी रोग का शिकार नहीं हो सकता, बल्कि यह क्रिया करते समय आकाश की ओर देखना पड़ता है फलतः नेत्रों की ज्योति बढ़ती है।
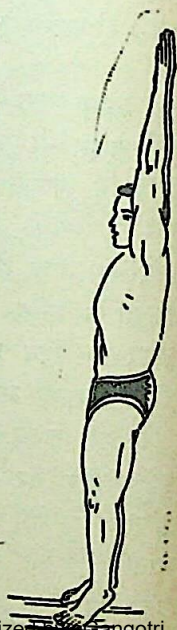
## चतुर्थ प्रकार

इस क्रिया का नाम हस्त पादासन है। इस तृतीय अवस्था में श्वास के साथ ऊपर उठे हुये दोनों हाथों को नीचे श्वास बाहर निकालते हुए चित्र में बताये गये अनुसार पैर की अन्त की अंगुलियों के पास जमा दें, नाक को घुटनों से अड़ा दें। पेट को अन्दर खींचें और पैरों को सीधा ही रखें।

लाभ—इस क्रिया के अभ्यास से छाती बलवान् होती है तथा अनेक उदर रोग मिट जाते हैं। हाथों में शक्ति का संचार होता है तथा बढ़ी हुई तौन्द (पेट) से हवा निकल जाने के कारण पेट छाती के अन्दर चला जाता है। इसके अतिरिक्त शरीर सुन्दर और दर्शनीय बनता है और विद्यार्थियों के आरोग्य तथा स्मरण शक्ति में वृद्धि होती है। जैसे कछुए के पैर एक बार चिपक जाने के पश्चात् उन्हें काट डाला जाय तो भी नहीं उखड़ते, उसी तरह कर्क राशि में लगाये गये पौधे दृढ़ मूल होते हैं और व्यायाम भी स्थायी फलदायक होता है।
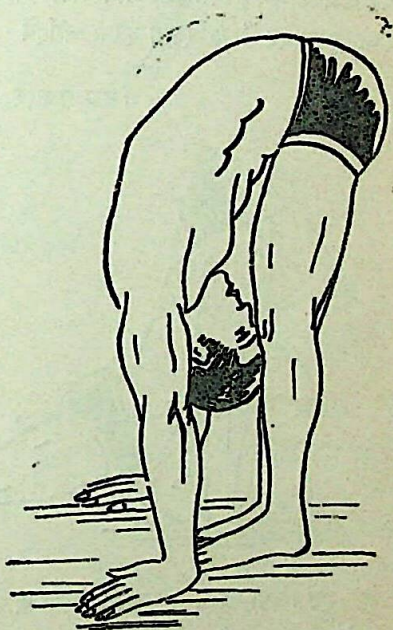
## पथ्यापथ्य

ज्येष्ठ और आषाढ महीने को वर्षा ऋतु कहा जाता है। इस ऋतु में वातवारी अथवा स्वादिष्ट खट्टे, लवणात्मक, ताजे स्वच्छ रसों का सेवन करना गुणकारी है। इसके अतिरिक्त इस ऋतु में आर्द्रता और नमी का प्रवाह रहने से तीक्ष्ण, आम्ल तथा साधारण कड़वे रसों का सेवन भी अच्छा है। पुराने चावल, जव, गेहूं, मक्खन, दूध, उड़द, दाड़िम, करेला, त्रिफला तथा साधारण गरम और स्निग्ध और वातनाशक पदार्थ ग्रहण करें। विलायती औषधियां, अति परिश्रम, रुखे-बासी आहार तथा शीतल पदार्थों का त्याग करना चाहिये।

## पंचम प्रकार
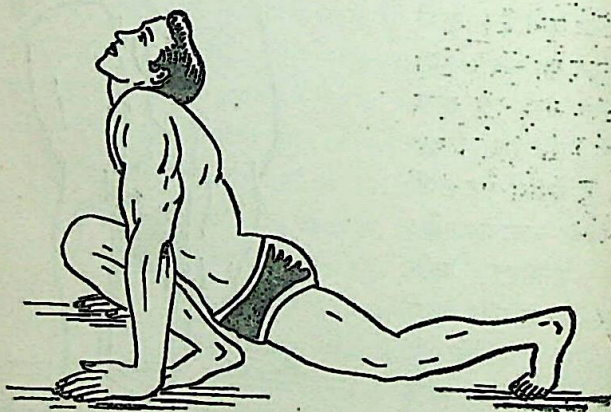
इस क्रिया का नाम एकपाद-प्रसारणासन है। इसमें चतुर्थ प्रकार में जहां हाथ रखा है, वहीं रहने दें। दाहिने पैर को भी यथावत् जमायें रखें, बायें पैर को पीछे ले जाकर दाहिने पैर की जानु के भाग से पेट का दाहिना भाग दबायें। पहले बाहर निकाल दिये गये श्वास को बाहर ही रहने दें, ध्यान रखें चतुर्थ अवस्था में पैरों को पास रखे हुये हाथ ११वीं अवस्था तक वहीं यथावत् जमे रहने चाहियें।

**लाभ—** इस क्रिया से लाभ यह होता है कि लीवर ( यकृत ) तथा छोटी आंत पर जोर पड़ने से तथा वीर्यवाहिनी नसों में तनाव होने से लीवर के रोग तथा कब्ज से छुटकारा मिलता है, धातुक्षीणता मिटती है। स्त्री-पुरुषों के रज वीर्य संबंधी रोगों का नाश होता है। गले के रोग मिटते हैं तथा स्वास्थ्य अच्छा होता है। यह प्रयोग आंखों के लिये भी हितकर है।

## षष्ठ प्रकार
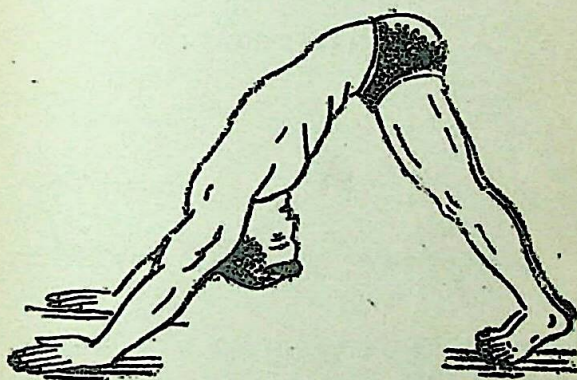
इसे भूधरासन कहा जाता है। दोनों हाथों को चतुर्थ अवस्था में जहां रखा था, वहीं रहने दे। दोनों पैर पीछे ले जाकर पैर की एड़ियों और समग्र तलुओं को जमीन से लगा दें। पैर के घुटने मुड़ने न पायें इस अवस्था में श्वास बाहर निकला रहता है, अतः पेट को जितना भी अन्दर खींचा जा सके, खींचे। शिर को अन्दर की ओर ले जाकर आंखों से अपने ही पेट की ओर देखें।

**लाभः—** यह क्रिया अभ्यस्त हो जाने पर घुटनों के रोगों का नाश होता है। हाथ-पैरों के रोग मिटते हैं। मोटी कमर सुन्दर और पतली बन जाती है। पेट के रोगों के लिये यह क्रिया रामबाण है। इसे दोनों

का काल कहा जाये तो अत्युक्ति न होगी। जैसे सूर्योदय के पश्चात् अन्धकार नहीं रहता, उसी तरह शरीर में सूर्य के जाग्रत हो जाने पर रोगों का नामो निशान नहीं रह जाता। स्त्रियों का अनियमित मासिक धर्म नियमित बनता है तथा शक्ति का संचार होता है। इस आसन में श्वास को बाहर निकाल कर उड्डीयान बन्ध की तरह पेट को अधिकाधिक अन्दर खींचना पड़ता है, फलतः आंतों में व्याप्त सूक्ष्म सूर्य जाग्रत होता है और पाचन शक्ति में वृद्धि होकर रोगों से सुरक्षित रखता है।

## सप्तम प्रकार

इस अवस्था को चतुरंग प्रणिपातासन कहते हैं। पैर के अंगूठों तथा हाथों के पंजों पर हाथ तथा समग्र शरीर को बिलकुल सीधा टिकाये रखें। दृष्टि सामने भूमिपर रखें। श्वास अन्दर खींचे।

**लाभः**— आश्विनमास में हवा के बदल जाने से प्राकृतिक रूप से वायु शरदी, गरमी, वात, पित, कफ इत्यादि दोषों को दबाकर यह अभ्यास स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर को संतुलित बनाता है। शरीर के सभी विकार मिट जाते हैं। इस क्रिया से शरीर का उचित विकास होता है और पेट में पहुँचा हुआ अधिक भोजन भी सरलता से पच जाता है। मल-मूत्र की सभी व्याधियां नष्ट होती हैं तथा रज वीर्य और बुद्धि बल का विकास होता है। इस प्रकार के व्यायाम से हाथ, छाती, मन तथा कमर के भाग बलवान् तथा स्थायी रूप से नीरोगी बन जाता है। स्त्री-पुरुषों की छाती मजबूत होती है और छाती के रोगों से आजीवन बचाव

रहता है। बच्चे को दूध पिलानेवाली माताओं के लिये यह व्यायाम अत्युत्तम है।

### अष्टम प्रकार
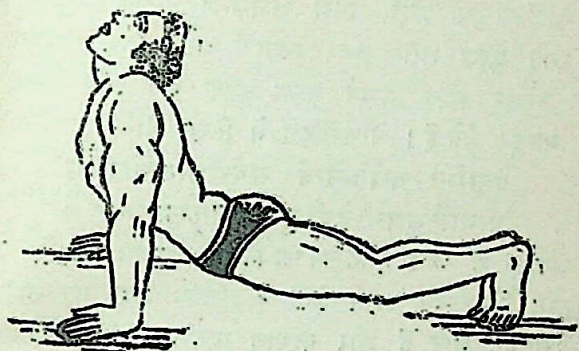
यह भुजंगासन है। सातवीं अवस्था के पश्चात् हाथ वहीं के वहीं रहने दें, और चित्र में बताये अनुसार श्वास अन्दर भरकर सर्प की तरह शिर ऊपर को उठाकर और पीछे की ओर तान दें, आंखें खुली रखें। हाथ सीधे रखकर शरीर को धनुषाकार मोड़ें। घुटने जमीन को छूने न पायें। बल्कि जमीन से एक इंच ऊंचा रखकर जितना ताना जा सके, उतना तना रखें। हाथ बिल्कुल सीधे ही रखें।

**लाभ**—यह आसन स्वयं भी लाभप्रद होता है परन्तु इसके साथ जब सूर्य-शक्ति की श्रद्धा भावना मिल जाती है, तब यह और तेजस्वी बन जाता है। इससे युवक, युवतियों के निस्तेज मुख पर सौन्दर्य की लाली देदीप्यमान हो उठती है। अन्दर बैठी हुई आंखें ऊपर आ जाती हैं और नेत्रों की ज्योति भी बढ़ती है। अन्दर दबे हुये गाल ऊपर उठ आते हैं। इस क्रिया से युवकों को तो सौन्दर्य मिलता ही है, साथ ही वृद्ध भी पुनः युवक बन

जाते हैं। स्त्री पुरुषों के रज वीर्य विषयक दोष दूर होते हैं। शीघ्र पतन और नपुंसकत्व भी मिट जाता है। युवकों का स्वप्न-दोष, युवतियों का प्रदर अथवा अनियमित मासिक का दोष मिटता है। इससे कुरूप शरीर सुन्दर बनता है शरीर नरम लचीला तथा कोमल बनकर सर्वांग सौन्दर्य धारण करता है। इससे हाथ, पैर दोनों मजबूत होते हैं। घेरण्डसँहिता में लिखा है:—

देहाग्नि वर्धतेनित्यं सर्वरोगविनाशनम्
जागर्ति भुजगी देवी भुजंगासन साधनात् ॥

अर्थात् जो लोग भुजंगासन का नियमित अभ्यास करते हैं, उनकी जठराग्नि दिनानुदिन उदीप्त होती है, फलतः उदर गत सभी रोग अनायास मिट जाते हैं और वक्ष्माण कुण्डलिनी शक्ति भी जाग्रत हो उठती है।

## नवम प्रकार

नवम प्रकार की स्थिति व लाभ षष्टम प्रकार के समान हैं।

## दशम प्रकार

इस अवस्था को एक पाद स्थितासन कहते हैं। यह माघ महिने का

साधन है। इस कीं क्रिया–विधि पंचम प्रकार के समान ही है, परन्तु इसमें सावधानी यह रखनी चाहिये कि दाहिने पैर को पीछे रखकर बायें पैर को आगे लाना चाहिये।

लाभ— इस आसन का लाभ यह है कि पानी में जैसे मगर चलता है, उसी तरह शरीर में तथा पैरों में रक्त भ्रमण की गति होने लगती है, फलतः पैर सुदृढ़ होते हैं और चलने कीं शक्ति अच्छी होती है। इस व्यायाम के साथ सूर्य देव की भावना करने से दौड़ने कूदने तथा खेल-कूद करने वाले लोग पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं।

## एकादश प्रकार

इस अवस्था को हस्त पादासन के नाम से पुकारा जाता है इसका अभ्यास फाल्गुन महीने में किया जाता है। भगवान् भास्कर की भावना के साथ यदि यह व्यायाम किया जाय तो पैर की अंगुलियों में होने वाले रोगोंका प्रतिरोध होता है।

इसकी अभ्यास विधि इस प्रकार है कि पीछे से पैर को आगे लाकर उसी स्थान पर दृढता पूर्वक स्थापित करें, जहां चौथी अवस्था में थे। तनिक भी आगे पीछे न हों। इस
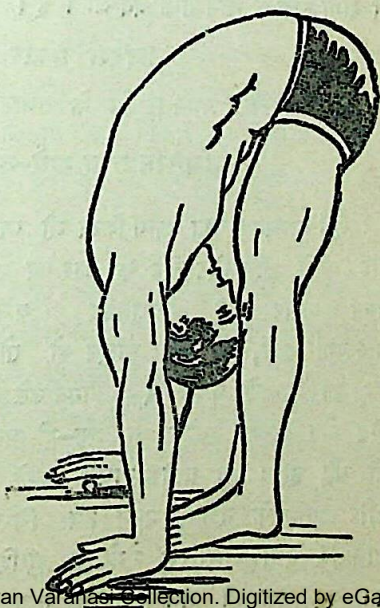
आसन की अवस्था चौथी अवस्था के समान ही है। अन्तर केवल इतना ही है कि मानव-शक्ति पैर की अंगुलियों में केन्द्रित करनी चाहिये।

**लाभ**— यह व्यायाम चौथी विधि के समान ही लाभ प्रदान करता है, साथ ही पैरों की अंगुलियों के रोगों को मिटा कर अशक्त लोगों को नई शक्ति प्रदान करता है।

इन दिनों में हलका, रूखा, बिना घी का गरम आहार लाभप्रद है, अतः गेहूं, मूग, उड़द, सोंठ, कालीमिर्च आदि का सेवन हितावह होगा। इस समय अपथ्य पदार्थ हैं विलायती औषधियां, अति खट्टा, बासी भोजन, आम का आचार, पचने में गरिष्ठ पक्वान्न और अत्यन्त तथा कफ वर्धक वस्तुएं। इस ऋतु में भी दिन में सोना हितप्रद नहीं। इन दिनो वस्तुमात्र में माधुर्य उत्पन्न होता है। कफ की वृद्धि होती है। शिशिर ऋतु में एकत्रित कफ इस ऋतु में प्रफुल्लित होता है। इस ऋतु में कफ का रोगी सदा के लिये रोगी बन जाता है।

## द्वादश प्रकार

बारहवीं स्थिति प्रथम स्थिति के समान है।

## शवासन तथा सूर्य-नमस्कार

सूर्य-नमस्कार तथा अन्य किसी भी व्यायाम से निवृत्त होकर आंख बन्द करके सीधे चित लेट कर शवासन करना चाहिये। हाथ-पैर तथा समग्र शरीर को आरामप्रद स्थिति में रखना चाहिए। मक्खियां काटें, खुजली मालूम हो तो भी उसकी चिन्ता न कर शांत मनसे केवल ५-७ मिनट लेटे रहें तत्पश्चात् अपने किसी प्रिय मंत्र अथवा श्लोक का मन-ही-मन पाठ करें। विशेष उत्तम तो यह होगा कि प्रत्येक साधक अपने इष्ट देव का ही ध्यान करें। और उसी के दर्शन, मनन तथा चिन्तन में मनको एकाग्र करें। मानसिक तथा शारीरिक रोगों से सुरक्षित रहने तथा उन्हें मिटाने का यह एक ही अमोघ, स्वतंत्र तथा सरल उपाय है।

# षष्ठः अध्याय

## विश्राम और स्वास्थ्य

उत्तम स्वास्थ्य एवं सशक्त शरीर के लिये जिस प्रकार आहार और व्यायाम आवश्यक हैं उसी प्रकार विश्राम भी आवश्यक है। विश्राम और व्यायाम दोनों स्वास्थ्य रक्षा के लिये समान स्तम्भ माने जाते हैं। स्वयं प्रकृति ने १ दिन के २४ घंटे को रात दिन दो भागों में विभक्त कर दिया है। दिन को श्रम और रात को विश्राम करने के लिये। जंगली जीव-जन्तु स्वच्छन्द विचरण करनेवाले पशु-पक्षी शाम होते ही अपने बसेरे में आकर विश्राम करते हैं और प्रातःकाल अपनी जीविका में जुट जाते हैं।

परन्तु आधुनिक युग में मनुष्य को इस प्रकार विश्राम का सुयोग पाना दुर्लभ हो गया है। रात-दिन एड़ी-चोटी का पसीना एक करके आवश्यक सामग्रियां इकट्ठी की जा रही हैं। जीवन लीला का संसार अब जीवन संग्राममें बदल गया है। समस्याओं को सुलझाने में लगे रहने से विश्राम का बहिष्कार होता जा रहा है और नित नई नई पहेलियां भी बनती जा रही हैं।

उपरोक्त कारणों से इस युग में अन्य रोगों की तरह अनिद्रा का भी एक महारोग फैला हुआ है। काम, मोह, लोभ, चिन्ता आदि मानसिक विकार मनुष्य के मस्तिष्क को इतना अशान्त बना दिये हैं कि वह

स्वाभाविक नींद की बार-बार अवहेलना कर उस शक्ति का गला घोंट देते हैं जिसके द्वारा श्रम से थकान के बाद विश्राम की सूचना मिलती है। इस प्रकार मनुष्य स्वाभाविक नींद को बेचकर कृत्रिम नींद खरीदने की चेष्टा करता है।

संसार में लाखों की संख्या में लोग ऐसे हैं जिन्हें अनिद्रा की शिकायत रहती है। उन्हें नित्य ही नींद की दवा खाकर बिस्तर पर जाना पड़ता है। कृत्रिम नींद से लोगों की थकान भी दूर नहीं होती और कितनों की तो मृत्यु ही हो जाती है, समाचार पत्रों में अक्सर ऐसे समाचार पढ़ने को मिलते हैं।

स्वाभाविक नींद से थकान दूर हो जाती है और शरीर की कार्यक्षमता ज्यों की त्यों बनी रहती है। श्रम के बाद विश्राम और विश्राम के बाद श्रम। इसी प्रकार जीवन नौका कच्चे धागे में बंधी हुई अविरल गति से चल रही है।

जिस प्रकार परिश्रम के बाद विश्राम करना आवश्यक है उसी प्रकार बीमारी की अवस्था में भी आराम करना चाहिये। बीमारी का एक शब्द पुराना उर्दु का है बेराम। बेराम से तात्पर्य है बिना आराम अर्थात् शरीर को विश्राम नहीं।

इसलिये बीमार पड़ने पर आराम करना आवश्यक है। आराम करने से प्रकृति शरीर की मरम्मत शीघ्रातिशीघ्र कर लेती है। विशेषरूप से टी. वी. में आराम अत्यधिक आवश्यक है। सभी प्रकार के तीव्र रोगों में शय्या पर पड़े रह कर रोगी को विश्राम करना चाहिये व दमा, गठिया, हृदय की धड़कन, पाकस्थली के घाव, बवासीर, ब्लडप्रेसर, मूत्रपथरी, पित्तपथरी के दर्द में भी रोगी को आराम करना चाहिये। मानसिक रोगों में बार बार शवासन करने पर विश्राम का लाभ लिया जा सकता है।

# सप्तम् अध्याय

## विश्वास और स्वास्थ्य

### औषधियों में महौषधि "विश्वास"

वैज्ञानिक औषधियों की अपेक्षा यदि संसार में कोई वस्तु, शक्तिशाली, रोग नाशक, फलदायी है तो केवल विश्वास। इस औषधि में जितनी शक्ति है उतनी संसार की किसी भी रासायनिक औषधि में नहीं है।

आरोग्य कीं भावना करने मात्र से जितना आरोग्य प्राप्त होता है उतना आरोग्य लाभ किसी दवाई से नहीं मिलता और रोग के विचार से जितना रोग आता या बढ़ता है, उतना किसी अन्य कुपथ्य से नहीं। सफलता प्राप्ति के लिये जिस तरह उसके प्रति आशा और आत्म विश्वास अनिवार्य है उसी प्रकार आरोग्य प्राप्ति के लिये भी आत्म विश्वास अनिवार्य है। आशंका, भय, चिन्ता आदि ही रोग के कारण बनते हैं। शरीर के आरोग्य की कल्पना ही स्वास्थ्य की कुंजी है।

बुरी भावनाओं से जिस प्रकार विभिन्न रोग पैदा होते हैं उसी प्रकार अच्छी भावनाओं से विभिन्न रोग अच्छे हो जाते हैं। सांप के काटने पर जितने लोग डर कर मर जाते हैं उतने उसके विष से नहीं।



यदि अवचेतन मन पर विश्वास पैदा हो कि रोग अच्छा हो गया

या अच्छा हो रहा है तो निश्चय ही रोग अच्छा हो जायगा। कारण कि शरीर और मन का घनिष्ठ संबंध है। मन रोगी तो शरीर रोगी और यदि शरीर रोगी तो मन रोगी रहता ही है। इसी प्रकार मन अच्छा तो शरीर अच्छा और शरीर अच्छा तो मन अच्छा। शीघ्र ही मैं स्वस्थ हो जाऊँगा! इस तरह अपने विचारों को दुहराते रहने से तथा सुबह शाम उठने और सोने के पहले स्वास्थ्य की भावना को प्रतिदिन विचार में लाना चाहिये। इस तरह स्वास्थ्य की भावना करते-करते एक दिन स्वास्थ्य अवश्य लौट आता है और इसके द्वारा एक दो नहीं सभी तरह के रोग अच्छे किये जा सकते हैं। इसलिये रोगी चाहे किसी प्रकार के रोग से ग्रसित क्यों न हो स्वास्थ्य की भावना का आभास करना आवश्यक है। दुनिया की किसी भी चिकित्सा प्रणाली से जो रोग अच्छा नहीं हो सकता वह स्वास्थ्य की भावना से अवश्य ठीक हो जाता है लेकिन ऐसी भावना अवचेतन मन से होनी चाहिये।

रोगी रोग से छुटकारा पाने के लिये डाक्टर के घर जाता है, डाक्टर रोगी को दवा देता है, परन्तु दवा से ही रोग अच्छा नहीं हो जाता। रोग अच्छा होता है रोगी के दवा के प्रति विश्वास से तथा डाक्टर के प्रति विश्वास से। डाक्टर का ठाठ-बाट, उसका रहन-सहन, बोल-चाल सब रोगी के मन पर एक प्रकार से गहरा असर छोड़ जाते हैं वही व्यवहार ही विश्वास की जड़ बनकर रोगी को अच्छा कर जाता है। मैं एक ऐसे महात्मा को जानता हूँ जो अपनी कुटी पर रहते हुये हजारों रोगियों की जान बचाये हैं। उनके पास आये हुये रोगियों को वे अपने बनाये हुये भोजन के उपले की राख की एक दो खुराक बहुत ही अल्प मात्रा में देते और रोगी को प्रति सवेरे ही उठकर खाली पेट नाड़ी देखने के लिये बुलाते और एक खुराक एक लोटा जल के साथ अपनी दवा कुटी पर ही पिला देते, और एक घंटे आराम करके फिर रोगी को घर जाने को कह देते और साथ ही जो भी दवा देते उसको जल के साथ पीने को कह देते। इसी राख की दवा से महात्माजी को काफी

ख्याति मिली। रोगी को सवेरे चार बजे उठकर महात्मा के पास कुटी पर जाने का व्यायाम, ठंडी हवा में होता था। साथ ही महात्माजी के पास से आते-आते दिन के नौ दस बज जाते, इस तरह उसका आधे दिन का उपवास हो जाता, साथ ही रोगी की उस राख के प्रति अटूट आस्था बन जाती थी, जिससे वे अच्छे हो ही जाते थे। इसी तरह किसी भी रोग का रोगी महात्मा के पास क्यों न जाय, दवा उनकी वही, राख के सिवाय दूसरा कुछ नहीं देते, और सब प्रकार के रोगी उनकी राख से अच्छे हो जाते थे।

अतः रोगी जितनी ही अधिक मात्रा में उपचार करनेवाले पर तथा उपचार में आनेवाली विधियों अथवा औषधियों पर विश्वास व श्रद्धा करेगा उतनी ही शीघ्रता से वह स्वस्थ भी हो जायेगा।

## अच्छे स्वास्थ्य की दिनचर्या

स्वास्थ्य रक्षा के लिये दिन रात में क्या, कब और कैसे किया जाना चाहिये इसके लिये प्राचीन काल से भारत में कुछ नियम चले आ रहे हैं। परन्तु आधुनिक युग में उन नियमों के पालन की परम्परा में बहुत कमी आ गई है। इसी कारण रोग भी अधिक बढ़ गये हैं और लोग पूर्ण स्वस्थ नहीं रह पा रहे हैं। परन्तु अच्छे स्वास्थ्य की इच्छा रखनेवाले हर व्यक्ति को चाहिये कि इन नियमों का नियमित पालन करे और स्वस्थ रहें। स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा धन है ( Health is Wealth ) जिस देश के लोग जितने स्वस्थ होते हैं वह देश उतना ही हर चीज में अग्रणी होता है।

प्रतिदिन सूर्योदय से दो घंटे पहले भगवान् का नाम लेकर बिस्तर छोड़ देना चाहिये। अन्य पशु पक्षी तथा बालक इस समय अवश्य जाग जाते हैं। इससे यह सिद्ध है कि उठने का प्राकृतिक समय यही है।

जिन्हें देर से उठने की आदत हो वे इसमें सुधार करके प्राकृतिक नियम से उठ जाना ही अपने लिये हितकर समझें। उठने के बाद मुँह हाथ धोकर नीबू के रस के साथ या सादा एक गिलास पानी ही पीना चाहिये। जैसे स्वास्थ्य के सम्बन्ध में घाघ ने एक उक्ति कही है:—

प्रातकाल खटिया ते उठिके, पिये तुरन्तै पानी।
ता घर कबहुँ वैद्य नहि आवै, बात घाघ कै जानी॥

और बाद में शौच जाने से पेट अच्छी तरह साफ हो जाता है। नियमित उपरोक्त नियम विधि के अपनाने से शौच अवश्य ही ठीक समय पर हो जाया करेगा।

कुछ लोगों की प्रातःकाल गरमा-गरम चाय पीने की आदत है, लेकिन वे प्रातःकाल उठते ही चाय पीकर अपने स्वास्थ्य के प्रति अन्याय करते हैं। चाय शीत प्रधान देशों के लिये हितकर हो सकती है परन्तु भारत जैसे उष्ण जलवायु वाले देश के लिये बहुत ही हानिकारक है। इसलिये हर भारतीय को प्रातःकाल जल पीने की आदत डालनी चाहिये।

पेट की सफाई के बाद दांत, नाक, मुँह की सफाई भी करनी चाहिये। दांत साफ रहें इसके लिये प्रतिदिन दन्त मंजन करना चाहिये। बालू से मिली मिट्टी से दांत बाजारू दन्त मंजन की अपेक्षा अधिक साफ एवं मोती की तरह चमकीले होते हैं। पेस्ट इत्यादि से दांत साफ करते रहने से कभी कभी दांत के अनामिल भी साफ हो जाते हैं। दांत को अधिक दिनों तक टिकाये रखने के लिये बालू युक्त मिट्टी ही सफाई के लिये उपयुक्त है। इसके अभाव में दातून या ब्रश द्वारा भी दांत साफ किये जा सकते हैं। यदि ब्रश के साथ बालू का प्रयोग किया जाय तो सर्वश्रेष्ठ होगा। परन्तु प्रतिदिन ब्रश को अच्छी तरह धोकर धूप में सूखा लेना चाहिये। ब्रश साफ न रहने पर मसूड़ों में रोग होने की सम्भावना रहती है।

दांत की सफाई के बाद नाक का नम्बर आता है। नाक अच्छी तरह धोकर थोड़ा बहुत नाक द्वारा पानी पीना चाहिये। नाक से पानी पीने से आंख की ज्योति बढ़ती है। मस्तिष्क भी ठंडा एवं शुद्ध रहता है। बाल सफेद जल्दी नहीं हो पाते तथा गिरते भी नहीं, लेकिन नाक से पानी पीने का अभ्यास धीरे धीरे बढ़ाना चाहिये।

इसके बाद कसरत करना या आसन करना या खुली हवा में टहलना उचित है। संसार के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों का विचार है कि प्रातःकाल खुली हवा में टहलना स्वास्थ्य के लिये बहुत ही लाभकारी है। अच्छा तो यह होता है कि आबादी से दूर किसी बाग-बगीचे में कसरत या किसी प्रकार का व्यायाम करके शरीर गर्म कर लिया जाय।

स्वास्थ्य रक्षा के लिये प्रतिदिन शुद्ध शीतल जल से स्नान करना आवश्यक है। जिनका स्वास्थ्य ठीक है उन्हें सदा ही शीतल जल से स्नान करना आवश्यक है। परन्तु जो लोग दुर्बल हैं उनको जाड़े के दिनों में शीतल जल अनुकूल नहीं। वे शीतोष्ण जल से स्नान कर सकते हैं। थोड़े पानी से नाम मात्र का स्नान व्यर्थ है। नदी तालाब में तैरकर या भरे टब में खुरदुरे तौलिये से खूब मल मलकर शरीर का मैल उतारना चाहिये और स्नान का आनन्द उठाना चाहिये। स्नान के बाद सूखी मालीश लेकर फिर शरीर गर्म कर लेना चाहिये। तभी स्नान का ठीक-ठीक लाभ मिलता है।

स्नानादि द्वारा शरीर की सफाई कर लेने के बाद मन की भी सफाई कर लेना स्वास्थ्य रक्षा के लिये अति आवश्यक है, क्योंकि स्वास्थ्य शरीर और मन दोनों की सफाई पर ही निर्भर रहता है। मन जितना साफ और उच्च स्थिति में रहता है उतना ही मजबूत रहता है। मन को मजबूत एवं सबल बनाने का सबसे सरल उपाय है ईश प्रार्थना। इसलिये स्नान के बाद यथावकाश भगवान् की आराधना करना आवश्यक है। जिन्हें जिस देवता के

प्रति विश्वास हो उसी की श्रद्धा एवं भक्ति पूर्वक आराधना करनी चाहिये और कामना करनी चाहिये कि आज का मेरा दिन सफलता एवं शांति पूर्वक बीते। नियमित भगवान् के चरणों में मन को केन्द्रित करने की चेष्टा को ही मन का व्यायाम कहा जाता है। धीरे-धीरे इसी प्रकार प्रयत्न करने पर मन स्थिर हो जाता है एवं शांति मिलती है जो कि जीवन रक्षा की प्रथम सीढ़ी है। साधना से जितनी ही सफलता मिलती है उतनी ही शक्ति। इसलिये दुर्बल शरीर को सबल बनाने के लिये आराधना आवश्यक है। विद्यार्थी उस समय में ईश प्रार्थना के बदले पठन-पाठन का समय रखें क्योंकि उस समय मन स्थिर रहता है, जो कुछ भी मनन किया जाता है वह कण्ठस्थ हो जाता है।

इसके बाद प्रातःकाल का (नाश्ता) जलपान करना चाहिये। जलपान में किसी फल का एक गिलास रस लिया जाये तो सबसे श्रेष्ठ होगा। यदि इसमें किसी तरह का अभाव या असुविधा हो तो उसके स्थान पर फलाहार, सलाद लेना ही जलपान का काम देता है। फलाहार सलाद में ऋतु के अनुसार कोई फल जैसे मौसम्बी, संतरा, सेव, नासपाती, अमरुद, पपीता, जामुन, खीरा, टमाटर, गाजर आदि खाकर जलपान का लाभ लिया जा सकता है। परन्तु जलपान हमेशा हल्का ही लेना चाहिये। हल्के नाश्ते से दोपहर को अच्छी भूख लगती है। यदि जलपान अधिक कर लिया जाये और दोपहर को भूख न लगने पर ही भोजन कर लिया जाये तो पाकस्थली में गड़बड़ी हो जाती है। सुबह के जलपान में शाम को भिगाई किशमिश का एक गिलास रस पीकर रहा जाये तो दोपहर को भूख अच्छी लगती है। किशमिश का रस क्षारधर्मी होता है जो लोग इसे महंगे होने के कारण नहीं ले सकते वे गाजर, टमाटर जैसे सस्ते फलों का रस लेकर इसका लाभ उठा सकते हैं।

प्रातःकाल जो लोग जलपान में चाय, बिस्कुट, पावरोटी आदि देर से पचने वाले पदार्थ लेते हैं उन्हें यह सब छोड़ देना चाहिये। क्योंकि इनके समान पेट को खराब करने वाला दूसरा पदार्थ नहीं है। चाय में टैनिक ऐसिड, कालफिन आदि विष परिपूर्ण मात्रा में विद्यमान हैं। चाय में जहां एक दो गुण हैं वहीं चार छः अवगुण भी। जिन अंग्रेजों से हमने चाय पान का व्यसन लिया है उनकी तरह ही चाय के साथ शुद्ध मक्खन लगे टोस्ट भी लें तो किसी हद तक क्षति पूर्ति हो सकती है। जो लोग ऐसा नहीं कर सकते उन्हें इसलिये चाय का सेवन नहीं करना चाहिये।

प्रातःकाल स्नान कर लेने के बाद दोपहर को स्नान करना कोई आवश्यक नहीं परन्तु भोजन निश्चित समय पर कर लेना ही चाहिये। भोजन में चोकर समेत आटे की रोटी, पाव डेढ़ पाव हरी तरकारी और साथ में थोड़ा सा सलाद होना चाहिये अथवा चावल, तरकारी और साथ में सलाद रखना चाहिये। जो लोग अधिक परिश्रम का काम करते हैं उन्हें थोड़ी सी दाल भी लेनी चाहिये। भोजन में थोड़ा दही, दूध, सर्बत, मट्ठा भी लेना अच्छा है, परन्तु यह सब ऋतु के अनुसार होना चाहिये। इस विषय में घाघ ने भी कहा है :—

सावन हर्रे भादौं चीत।
क्वार मास गुड़ खायेउ मीत॥

कातिक मूली अगहन तेल।
पूस में करे दूध से मेल॥

माघ मास घिउ खिचड़ी खाय।
फागुन उठि के प्रात नहाय॥

चैत में खाये नीम वेहसनी।
बैसाखे में खाय जड़हनी॥

जेठ मास जो दिन में सोवै।
ओकर जर अषाढ़ में रोवै॥

इसी प्रकार न लेने वाले पथ्यों का भी विवेचन उन्होंने किया है।

चैतइ गुड़ वैशाषइ तेल।
जेठ क पंथ अषाढ़ क बेल॥

सावन साग न भादौं दही।
कार करैला कातिक मही॥

अगहन जीरा पूषै धना।
माघै मिश्री फागुन चना॥

दोपहर को भोजन कर लेने के बीस पचीस मिनट बाद काम पर लगना उचित है। शहरी लोग भोजन करके ही आफिस की राह लेते हैं, उन्हें चाहिये कि आधे घण्टे पहले भोजन कर थोड़ा सा आराम कर लें।

भोजन तथा आराम करने के बाद अपनी जीविका में जुट जाना चाहिये। किसी भी काम को सदैव अपना समझना चाहिये और पूरी सतर्कता बर्तनी चाहिये। अच्छे काम करके वह समाज के समक्ष एक आदर्श पुरुष बन सकते हैं। काम से कभी भी जी नहीं चुराना चाहिये। शक्ति से बाहर भी काम करना स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। सच्चाई से काम करने पर सदैव ही सफलता मिलती रहेगी। "सत्यमेव जयते"। चोरी, बेईमानी करने पर आप की स्वयंकी आत्मा आप को क[illegible]ा रहेगी क्योंकि आत्मा स्वच्छ एवं निर्मल है; इसका हनन कर देने से असन्तोष, दुःख एवं ग्लानि होगी जो कि मस्तिष्क को बहुत धक्का पहुचाते हैं, और उनसे मानसिक रोगों की उत्पत्ति होती है। फिर मानसिक विकार से शारीरिक विकार भी होने में संदेह नहीं रहता। इस–

लिये कर्तव्य हमेशा सच्चाई एवं परिश्रम से ही करना चाहिये । दिनभर के काम के बाद, जिन लोगों को काम कुर्सी पर बैठकर करना पड़ता है, उनको खेल खेलना या व्यायाम करना आवश्यक है । बाद में शौच से निवृत्त होकर रांझ समय का स्नान करना चाहिये । परन्तु जिनको शारीरिक परिश्रम करना पड़ता हो उनके लिये खेल कोई आवश्यक नहीं है ।

शाम का भोजन भी सोने से दो तीन घन्टे पहले ही कर लेना आवश्यक है । भोजन करने के बाद ही सो जाने से पाचन ठीक ढंग से नहीं होता और न गाढ़ी नीद ही लगती हैं । जिस प्रकार दोपहर को भोजन करने के बाद बीस–पचीस मिनट आराम कर लेना चाहिये उसी प्रकार शाम को भी भोजन करने के बाद बीस–पचीस मिनट आराम करें और फिर टहलने जाना या इष्ट-मित्रों के साथ बैठकर हास्य विनोद करना चाहिये और लगभग नौ दस बजे सो जाना उचित है ।

सदैव सोने से पहले भगवान् का स्मरण करना चाहिये । शरीर को गठन एवं दिन भर के काम से क्षीण हुई शक्ति गाढ़ी नीद में सोने से पुनः सचित हो जाती है । प्रायः लोग रात को सिनेमा देखते हैं, क्लब में जाते हैं और विद्यार्थी देर तक पढ़ते हैं और प्रातः देर से उठते हैं ऐसे लोग अपने स्वास्थ्य पर स्वयं कुठाराघात करते हैं । जो विद्यार्थी रात को अधिक देर तक पढ़ते हैं उन्हें अक्सर अधिक पाठ याद नहीं होता क्योंकि शाम के समय नींद की सवारी हो जाती है और शरीर सुस्त हो जाता है साथ ही साथ मस्तिष्क भी काम नहीं कर पाता । इसलिये शाम के समय का चार घन्टे का पढ़ना सुबह के एक घन्टे के बराबर होता है । सोये हुये आदमी को भी जगाना ठीक नहीं किन्तु अधिक सोना भी स्वास्थ्य के लिये हानि-कारक है जैसे अधिक भोजन ।

दैनिक क्रियाओं के अतिरिक्त भी कुछ ऐसे नियम हैं जिनसे स्वास्थ्य-रक्षा में विशेष सहायता मिलती है । प्रायः उन्हें भी अपने जीवन में

उतारने की कोशिश करनी चाहिये। इनका भली भांति पालन करते रहने पर निरोग रहते हुये दीर्घजीवी बन सकते हैं।

"स्वस्थ रहना है तो खाने को आधा करो, पीने को दूना करो, करने को तिगुना करो और हँसने को चौगुना करो"।

जी खोलकर हँसने के समान, दुश्चिन्तायें एव अशान्ति को मन से निकालने के लिये दूसरा कोई उपाय नहीं है।

बीमार पड़ने पर जरा भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। चिन्ता चिता की सगी बहन है। चिता मुरदे को जलाती है और चिन्ता जिन्दा ही जला डालती है। खाना खाने के पहले जी खोलकर हँसना या गाना अच्छा है। सदा प्रफुल्लित मन से रहना चाहिये। प्रसन्नता स्वास्थ्य को सुधारती और रोग को दूर भगाती है। हँसना प्रकृति की सबसे सस्ती दवा है। अमीर गरीब सब को मन चाहा मिलता है। कहा भी है Laughing is the best exercise for health जिस प्रकार शोक चिन्ता, उद्वेग, भय, क्रोध, ईर्ष्या आदि मनुष्य को दुःखी एवं अल्पायु बनाते हैं उसी प्रकार हँसना और आनन्दित रहना दीर्घजीवी बनाते हैं।

स्वास्थ्य रक्षा में ब्रह्मचर्य का विशेष स्थान है। शरीर की सबसे बड़ी एवं बहुमूल्य सम्पत्ति वीर्य ही है। इस सम्पत्ति को खोकर सुख एवं निरोग रहने की कल्पना करना आकाश से तारे लाने के समान है। क्षणिकावेश में आकर शरीर की बहुमूल्य वस्तु को खो देना उचित नहीं है। वीर्य ही शरीर की बहुलांश जीवनशक्ति है। विद्यार्थी जीवन में वीर्य रक्षा करना परमावश्यक है। विद्यार्थी-जीवन में यदि वीर्य रक्षा नहीं की गई तो गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करने पर कभी भी सुखमय जीवन नहीं बिताया जा सकता। शीघ्र-पतन और स्नायुमंडल की शिथिलता से स्त्री को तृप्त न कर सकने के कारण स्त्री के सामने आने में ऐसे लोगों को अति

संकोच एवं लज्जा का अनुभव होता है। उस समय में घर से दूर भागने या आत्महत्या करने की लोग मन में ठान लेते हैं। तात्पर्य यह है कि गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करने के पहले कठोर ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये।

केवल स्त्री-सम्भोग से ही वीर्य का नाश नहीं होता बल्कि ऐसे बहुत से रास्ते हैं। जैसे स्वप्नदोष, शरीर के प्रत्येक परमाणुओं से भी वीर्यस्खलन होता है। मन, वाणी और कर्म से भी इस संचित शक्ति का अपव्यय होता है। गृहस्थ-आश्रम में प्रवेश करने पर भी ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। इसके लिये ब्रह्मचर्य सम्बन्धी पुस्तक पढ़िये। पराई स्त्री को कभी बुरी निगाह से नहीं देखना चाहिये। मन पर नियन्त्रण रखना अति आवश्यक है। मन और शरीर का घनिष्ठ संबंध है। ब्रह्मचर्य रक्षा के लिये ईश्वर की उपासना-मनन आदि करना चाहिये। ब्रह्मचर्य से युक्त पुरुष को संसार की असम्भव-सम्भव सभी वस्तुयें उपलब्ध हैं। गंदे चित्र नहीं देखने चाहियें। गन्दी पुस्तकें नहीं पढ़नी चाहियें। इन सब चीजों का संयम से पालन करने पर आजीवन स्वस्थ रहा जा सकता है।

**जिसने इन्द्रियों को अपने वस में कर लिया है, उसे स्त्री तृण तुल्य जान पड़ती है।**

卐卐卐卐

**जैसे कछुआ अपने सब अंगों को समेट लेता है उसी प्रकार जब मनुष्य अपनी इन्द्रियों को विषयों से खींच लेता है, तभी उसकी बुद्धि स्थिर होती है।**

# अष्टम् अध्याय

## प्राकृतिक चिकित्सा का चमत्कार

नये रोगों का आक्रमण जितनी शीघ्रता से होता है, उनमें से अधिकांश उतनी ही साधारण प्राकृतिक चिकित्सा से ही ठीक हो जाते हैं। औषधि से रोग जितने समय में ठीक होते हैं, उससे बहुत ही कम समय में प्राकृतिक चिकित्सा से रोग ठीक हो जाते हैं। कुछ ऐसे प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सा में हैं जिनके प्रयोग से जादू की तरह लाभ होता है। वर्त्तमान युग में जीवाणु-नाशक औषधियों का प्रयोग करके रोगी प्रायः रोग को दबा देता है, यह ठीक है कि विषैली दवाइयां से जीवाणु मरते हैं, परन्तु जिस अवस्था के कारण विभिन्न जीवाणु वृद्धि पाते हैं, वह दूर नहीं होती। एक के नष्ट होने पर दूसरा जन्म लेता है इसी तरह क्रम बँधा ही रहता है और औषधि चालू ही रहती है। इसी चेष्टा का फल होता है, पुराना रोग। प्रकृति का इस तरह गला घोटकर विषैली औषधियों से रोग की दवा कर रोगी इस भ्रम में रहता है कि उसका रोग दूर हो रहा परन्तु वह नाना प्रकार के पुराने रोगों से ग्रस्त होता रहता है।

किन्तु प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा रोग दबाया नहीं जाता किन्तु जिस अवस्था के कारण रोग-जीवाणु वृद्धि पाते हैं उसी को देह से निकाल दिया जाता है।

**एनिमा:**— तीन बार पेट गर्म ठंडा सेक देकर एनिमा ले लेने पर पेट शीघ्र साफ हो जाता है और पेट के प्रति कुछ सोचने को रह ही नहीं जाता बल्कि इसके साथ ही किसी भी रोग के आक्रमण को खत्म कर दिया जाता है।

**गर्म ठंडे कुल्ले:**— दांत-दर्द में तीन तीन बार गर्म-ठंडे कुल्ले कर लेने मात्र से ही आराम हो जाता है। जितना ही यह दांत-दर्द में लाभ पहुंचाता है उतना ही मसूढ़ों के व्रण में भी। अधिक लाभ उठाना हो तो साथ ही ऊपर से भी गर्म ठंडे का प्रयोग किया जा सकता है।

**छाती की पट्टी:**— शर्दी में यह जादू की तरह लाभ पहुंचाती है। शर्दी में जब नाक से पानी बहने लग जाय तो डेढ़ घण्टे के लिये छाती की पट्टी लेने से शीघ्र लाभ होता है। शर्दी के अतिरिक्त यह इनफ्लूएंजा, निमोनियां, ब्रंकाइटिस, दमा और टी. बी. में भी लाभ पहुंचाती है। छाती की पट्टी लेने के पहले नीबू के रस के साथ गरम पानी के एनिमा द्वारा पेट साफ कर लिया जाय तो अति उत्तम होगा।

**गर्म-ठंडे पानी का गरारा:**— एक साथ दो गिलासों में गर्म और ठंडा पानी अलग-अलग लेकर तीन तीन मिनट का गर्म ठंडे पानी का गरारा करने से खांसी शीघ्र दूर हो जाती है। एक साथ इसका तीन बार प्रयोग करना चाहिये। गरारा करने के बाद ठंडे पानी में भिगो कर हाथ से छाती और पीठ को अच्छी तरह रगड़-रगड़ कर गर्म और लाल कर लेने पर किसी भी प्रकार की खांसी क्यों न हो बन्द हो जाती है और रोगी को आराम हो जाता है।

**सिर पट्टी:**— बुखार के समय बड़बड़ाना और सरदर्द कम करने के लिये बहुत ठंडे पानी में भिगाये हुये तौलिये को रोगी के सिर पर गरदन तक रखने से लाभ होता है, परन्तु इसे चार पांच मिनट पर बदल देना आवश्यक है और साथ ही पट्टी का बहुत ठंडा होना जरूरी है।

यदि आवश्यक समझा जाय तो बर्फ के चूरे का प्रयोग पट्टी के बदले करना चाहिये। जिस तरह यह पट्टी बड़बड़ाने, सिरदर्द और बुखार को कम करती है उसी तरह कटे हुये घाव में भी लाभ पहुंचाती है।

**आंशिक भाप स्नान:—** किसी प्रकार के दर्द को कम करने के लिये यह गर्म ठंडे सेक के समान ही है। एक बर्तन में खौलते हुये पानी को लेकर उसके ऊपर आक्रांत अंग को रखकर बर्तन समेत उक्त अंग को कम्बल आदि से ढककर आंशिक भाप स्नान लिया जा सकता है। भाप स्नान लेने के बाद उस अंग को ठंडे पानी में भीगे तौलिये से अच्छी तरह पोंछ डालना चाहिये।

**बर्फ की पट्टी:—** हिस्टीरिया रोग में अंगों की ऐंठन कम करने के लिये बर्फ की पट्टी का मेरुदंड पर प्रयोग करने से तात्कालिक लाभ होता है।

**गर्म कटिस्नान:—** पेशाब के बन्द हो जाने पर रोगी की बेचैनी और तकलीफ दूर करने के लिये इसके समान दूसरा और कोई इलाज नहीं है। बहुत बार गर्म पानी में बैठते ही पेशाब हो जाता है। मूत्राशय पर गर्म ठंडा सेक देकर खूब गर्म पानी का एनिमा देना चाहिये। इसके बाद गर्म कटिस्नान लेने से पेशाब होने में कोई सन्देह ही नहीं रह जाता।

**गर्म पैर-स्नान:—** सिर-दर्द शुरु होने पर रोगी को गर्म पैर-स्नान देने से शीघ्र लाभ होता है। परन्तु गर्म पैर-स्नान के समय रोगी को पांच पांच मिनट पर सिर पर ठंडी पट्टी का बदल बदल कर प्रयोग करते रहना चाहिये।

दमा का दौरा जब किसी प्रकार की औषधि या टेबलेट अथवा इन्जेक्शन आदि से कम नहीं हो तो रोगी का पेट साफ करके एक बार

गर्म पैर–स्नान कराने मात्र से रोगी का सांस का कष्ट देखते देखते जादू की तरह छू मन्तर हो जाता है।

**गले की पट्टी:—** गला बैठ जाने पर गले की पट्टी प्रयोग करने से शीघ्र लाभ होता है।

**गर्म ठंडा सेक:—** किसी भी दर्द को कम करने हेतु इससे बढ़कर कोई प्रयोग नहीं है। लेखक ने स्वयं गठिया रोग से पीड़ित रहने की दशा में इसका उपयोग कर अनुभव किया है।

## श्यामराज धारावी काला किला साइन बम्बई का स्वानुभव

मेरे रोगी होने में कोई विशेष विचित्रता नहीं है। साधारणतः मैं भी उन्हीं कारणों से बीमार पड़ा जिससे अक्सर मनुष्य बीमार हुआ करते हैं। मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में ही हस्त मैथुन सीख लिया था। मुझे खास याद नहीं फिर भी जहां तक याद है इस कुटेव में चार-पांच वर्ष बिता डाले। अपने शरीर का अमूल्य रत्न इसी प्रकार गंवाता रहा। पुस्तकों एवं पत्रिकाओं द्वारा इसकी बुराइयां ज्ञात हुईं। तब मैंने अपनी इन आदतों पर विचार करना शुरू किया और विजय पाई।

हस्त मैथुनसे तो मैं छुटकारा पा गया परन्तु शीघ्र ही स्वप्नदोष होना शुरू हो गया। हफ्ते में तीन चार दिन और कभी कभी रात में दो-दो तीन-तीन बार हो जाया करता था। अवस्था यहां तक पहुंच गई कि चैतन्य अवस्थामें भी वीर्यपात हो जाता था। अब मुझे इसके प्रति विशेष चिन्ता हुई। पत्र पत्रिकायें तो पढ़ता ही था उनके विज्ञापन पढ़कर इसके लिये दवाइयां मंगानी शुरू कर दी। पर बड़े–बड़े वादे करने वाली दवाइयां भी निरर्थक और व्यर्थ सिद्ध हुईं। मेरी मानसिक चिन्ता और बढ़ गई और स्मरण शक्ति का ह्रास होने लगा। इसी बीच मेरी शादी हो गई।

मेरी शादी हुये चार-पांच वर्ष बीत गये, रोग बढ़कर यहां तक पहुंच गया कि पेशाब के समय, शौच के समय जरा सा भी ताकत पड़ने पर धातु जाने लगती और थोड़ी उत्तेजना मात्र से ही पतन हो जाता। इस प्रकार धातु दुर्बलता के पंजे में आ फंसा और अभी तक बाप नहीं बन पाया था और न तो अपनी धर्म पत्नी को ही संतुष्ट कर सका। इस रोग से ग्रसित होंने के साथ–साथ आंव से भी मेरी टक्कर हो गयी। और वह विजयी हुआ। आंव दस्त के समय में चिप-चिपा द्रव्य जैसा जाता और मैं यही महसूस करता कि धातु ही जा रही हैं। इस तरह दशा विगड़ती गई। एक के बाद दूसरी दवा का सेवन करता परन्तु लाभ के स्थान पर खाली निराशा मिलती। शरीर एक हड्डी का पुतला ही रह गया। वजन नव्वे पौंड तक पहुंच गया। घर वाले भी मेरे प्रति उदासीन एवं दुःखी रहने लगे।
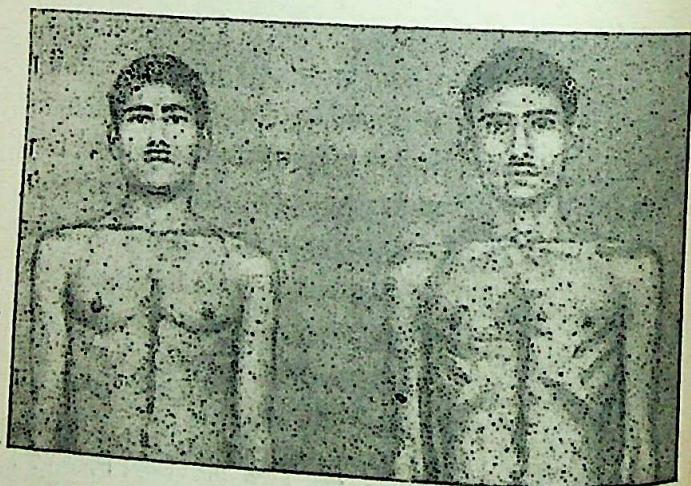
चिकित्सा के बाद ] श्यामराज [ चिकित्सा के पहले

एक दिन मैंने अपनी बुरी आदतों एवं रोगके बारेमें बड़े भाई से बात की। प्राकृतिक चिकित्सक दिलराज सिंह उनके मित्रों में से एक थे। भाई

साहब उनके पास ले गये और सारी कहानी सुना डाली। कहानी को सुनकर चिकित्सक महोदय ने मुझे आश्वासन दिया कि आप का रोग शीघ्रातिशीघ्र दूर हो जायगा। मेरे लिये यह चिकित्सा नवीन होते हुए भी मैंने महाराजी प्राकृतिक चिकित्सालय में चिकित्सा करानी शुरू कर दी।

आरम्भ में मेरा भोजन बन्द करके केवल सन्तरे के रस एवं बारह घंटे पानी में भिगाये किशमिश आहार के रूप में दिये जाते थे। बीच-बीच में कभी सब्जियों का सूप दिया जाता था। चिकित्सा में सुबह ७ बजे पेड़ू पर मिट्टी की पट्टी, एक घन्टे के बाद एनिमा, पेट पर गर्म ठंडा सेक देकर दिया जाता था। इसी क्रम से मेरा पेट साफ किया जाता था। पेट साफ हो जाने के बाद कटि स्नान कराया जाता। शाम को भी कटिस्नान दिया जाता था। कभी-कभी गर्म ठंडा कटि स्नान दिया जाता, हफ्ते में एक बार भाप स्नान द्वारा पसीना निकाला जाता, दो सप्ताह बाद गीली चादर की लपेट दी जाती थी। इस तरह लगभग २० पचीस दिन चिकित्सा चलने के बाद उपवास शुरू किया गया, उपवास काल में चिकित्सा विधि कम कर दी गई। केवल मिट्टी की पट्टी, पेट कीं सेक और एनिमा पूर्व की तरह जारी रहा। शेष सभी चिकित्सा बन्द रखी गई। उपवास में दो छोटें नीबू के रस के साथ पानी दिया जाता और शाम को तेल मालिश की जाती। दिन भर में लगभग ३ सेर पानी पीता था।

इसी प्रकार पानी पर रखकर पन्द्रह दिनों का उपवास करा कर सोल-हवें दिन मौसम्बी का रस गर्म पानीमें मिलाकर उपवास भंग कराया गया। सतरहवें दिन से मट्ठा कल्प शुरु कर पांच सप्ताह तक चलता रहा।

चिकित्सा अवधि में वजन घटकर अवश्य कुछ कम हो गया था। परन्तु मट्ठे कल्प से वजन धीरे-धीरे बढ़ गया। कल्प बन्द करके फल सब्जी शुरू कर दी गई और बाद में रोटी पर भी जोर दिया गया। एनिमा बन्द करके आसन एवं प्राणायाम कराया जाना शुरू किया गया। इस प्रकार अठारह दिन में जब साधारण भोजन पर आ गया तो डा. महोदय ने चार माह तक ब्रह्मचर्य पालन करने का आदेश देकर विदा किया। अंत में

एक बच्ची का बाप हूँ और परिवार में सबसे स्वस्थ व्यक्ति माना जाने लगा हूं। मैं अब रोग से छुटकारा पाने के साथ-साथ खान-पान रहन-सहन संबंधी बुराइयों से भी मुक्त हो गया हूँ। —श्यामराज यादव
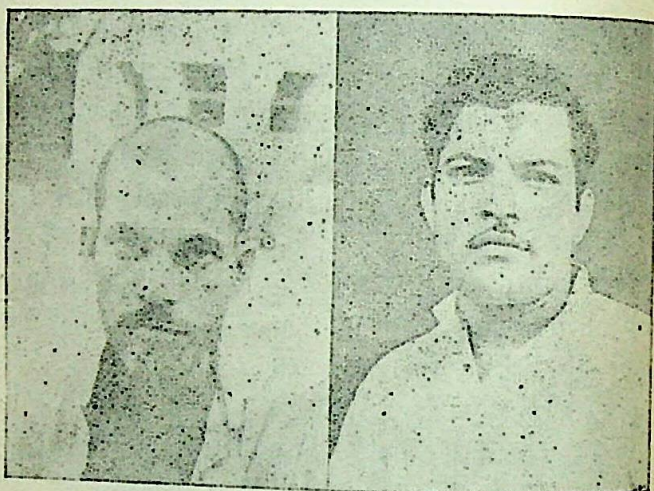
चिकित्सा के पहले ] लेखक [ चिकित्सा के बाद

मैंने अपने दो शब्द में केवल गठिया रोग का ही जिक्र किया है, परन्तु गठिया के अतिरिक्त स्वप्नदोष, फास्फेट युक्त पेशाब, मानसिक दुर्बलता, सिरदर्द, स्मरण शक्ति का ह्रास, स्वभाव में चिड़चिड़ापन, सर के बाल गिर जाना आदि रोगों से भी मैं ग्रसित था। शरीर सूखकर सिर्फ हड्डियों का एक पुतला रह गया था। मैंने गठिया रोग से तो छुटकारा पाया ही साथ ही साथ अन्य रोगों के लक्षण भी दूर होते गये। इस प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा कराके स्वयं प्राकृतिक चिकित्सक भी बन गया। मेरे स्वास्थ्य को देखकर एवं रोग की कहानी सुनकर लोग बरबस मेरे पास चिकित्सा कराने या सलाह लेने चले आते हैं। मैं अपनी क्षुद्र बुद्धि से जो कुछ सलाह या चिकित्सा कर देता हूं, उससे दुःखी व्यक्तियों को लाभ हुआ देखकर मुझे बड़ी खुशी होती है। —दिलराज सिंह

# नवम् अध्याय

## प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति

लोगों को प्रायः भ्रम रहता है कि प्राकृतिक चिकित्सा में लाभ देर से होता है, यह उन्हीं को होता है जिन्हें प्राकृतिक चिकित्सा की विधियों के बारे में जानकारी नहीं है। प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली में अन्य चिकित्सा से शीघ्र लाभ होता है। जो लोग अन्य चिकित्सा द्वारा अच्छे नहीं किये जा सकते उनमें कुछ समय अवश्य लगता है। क्योंकि ऐसे रोगों को छोटे-छोटे तीव्र रोगों में बांटकर चिकित्सा की जाती है, जिसे प्राकृतिक चिकित्सक उभार के नाम से सम्बोधित करते हैं।

अब तो दूसरी प्रणाली के चिकित्सक भी प्राकृतिक चिकित्सा का सहारा लेने लगे हैं। जैसे बुखार के रोगी का बुखार जब टेबलेट और इंजेक्शन द्वारा ठीक नहीं होता तो गीली चादर एवं मस्तक पर ठंडी पट्टी का प्रयोग करते हैं और इससे शीघ्रातिशीघ्र आराम हो जाता है। इसी तरह सेक आदि प्रयोग अन्य चिकित्सा पद्धति वाले अपनाते चले जा रहे हैं। अच्छा तो यह होता कि जहां एक दो प्रयोग विधियों को काम में लाया जा रहा है वहां प्राकृतिक चिकित्सा के सभी साधन सरकार जुटा देती तो रोगियों का बहुत उपकार हो जाता।

आज भी देहातों में डाक्टर वैद्यों की सुविधा नहीं है, फिर भी लोग प्रकृति के अनुकूल रहकर रोग से छुटकारा पा जाते हैं जबकि सभ्य समाज के लोग दवा दारु के बल पर भी अस्वस्थ हैं। गांधीजी के विचारानुसार

जहां डाक्टर वैद्यों की भरमार हो जाय वहां रोगियों की कमी नहीं रहेगी। इसी प्रकार जहां गन्दे साहित्य की अधिकता रहेगी वहां के लोग आचरण भ्रष्ट अवश्य रहेंगे गांधीजी का उपरोक्त विचार शहरी लोगों पर दृष्टिपात करने से पूर्णतः सत्य सिद्ध होता है।

## विधि

प्राकृतिक चिकित्सा की सफलता उसकी प्रयोग विधियों पर ही आधारित है। इसलिये चिकित्सा आरम्भ करने के पहले प्रयोग विधियों के बारे में जानकारी कर लेना आवश्यक है। प्राकृतिक चिकित्सा में प्रयोग में आनेवाली विधियों का वर्णन अगले पृष्ठों पर दिया जा रहा है जिसे साधारण हिन्दी का जानकार भी समझकर लाभ उठा सकता है। अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये डा. कुलरंजन मुकर्जी द्वारा लिखित "अभिनव प्राकृतिक चिकित्सा" अवश्य पढ़िये।

प्राकृतिक चिकित्सा के कुछ ऐसे भी प्रयोगों का वर्णन दिया जा रहा है; जिनका इस पुस्तक में कहीं भी रोग से सम्बन्धित वर्णन नहीं है।

## उपवास

प्राकृतिक चिकित्सा का सबसे बड़ा शस्त्र है उपवास। मनुष्य को छोड़ कर संसार के सभी जीव जन्तु रोग ग्रस्त होने पर उपवास ही करके अच्छे होते हैं। प्राचीन काल में संसार का जितना भी बड़ा कार्य किया गया है वह सब उपवास के बल पर। माता पार्वती ने शंकर को पाने के लिये उपवास ही किया था। बापूजी ने भी भारत को स्वतंत्र उपवास के बल पर ही किया था और जब भी उन्हें किसी महान् संकट का सामना करना पड़ता था उपवास ( अनशन ) का सहारा लेते थे। उपवास में उनका बड़ा विश्वास था। आज भी संसार के सभी धर्मों में उपवास को मान्यता दी जा रही है। ऐसा क्यों? इससे लाभ है।

बहुधा रोगों की उत्पत्ति हमारे गलत खान-पान, रहन-सहन से ही होती है। इसके कारण हमारे शरीर का रक्त दूषित हो जाता है गलत खान पान से रक्त दूषित होता है वहीं उपवास से रक्त-शुद्धि भी शीघ्रातिशीघ्र होती है।

एक दिन का उपवास रोगी एवं स्वस्थ दोनों प्रकार के मनुष्य ले सकते हैं परन्तु लम्बे उपवास में रोगी को अभ्यस्त होना आवश्यक है। लम्बा उपवास करने के लिये पहले एक दो दिन खट्टे फलों को खाकर रहना चाहिये · उपवास काल में पानी में नीबू का रस डालकर अधिक मात्रा में पीना चाहिये। साथ ही गुनगुने पानी के एनिमा द्वारा पेट साफ कर लेना चाहिये। तभी उपवास से लाभ होता है क्योंकि उपवास में पेट अपने से साफ नहीं हो पाता।

छोटे उपवास में खुली हवा में टहलने, स्नान आदि दैनिक कर्मों के अलावा थोड़ा शारीरिक परिश्रम भी आवश्यक है, परन्तु लम्बे उपवास में नहीं। लम्बे उपवास में चक्कर, सिर दर्दादि क्षणिक विकारों से घबराना नहीं चाहिये। ऐसी अवस्था में ठंडे पानी से सिर धो लेने से आराम हो जाता है।

छोटे उपवास में तो नहीं, पर लम्बे उपवास को तोड़ने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। उपवास करना सहज है पर तोड़ना नहीं। उपवास काल में पाकस्थली संकुचित होकर छोटी हो जाती है और भूख अधिक बढ़ जाती है इसी कारण अधिक खाने की इच्छा रहती है, पर अधिक खा लेने से नुकसान होने की सम्भावना रहती है। इसलिये उपवास के बाद कई दिनों तक तरल पथ्य पर ही रहना चाहिये इसे भी अल्प मात्रा में शुरू कर क्रमशः बढ़ाना चाहिये। इसके बाद फल, फल के बाद धीरे धीरे भोजन पर आना चाहिये।



उपवास तोड़ने के लिये १ छटांक मौसम्बी का रस या पानी में भीगे

किशमिश का रस १ छटांक गर्म पानी में लें। पहले दिन इसे तीन चार बार लेना चाहिये। यदि फल का रस न मिले तो परवल, नेनुआ, लौकी पकाकर उसका सूप लिया जा सकता है। दूसरे दिन से इसकी मात्रा क्रमशः बढ़ानी चाहिये।

उपवास तोड़ने के बाद कोई भी दुस्पाच्च पदार्थ नहीं ग्रहण करें। तीव्र रोग तो एक मात्र उपवास करने से ही जाते हैं, पर जीर्ण रोग से छुटकारा पाने के लिये पहले छोटे छोटे ही उपवास करना अच्छा है। फिर अभ्यस्त हो जाने पर लम्बा उपवास करना चाहिये। परन्तु जब कभी लम्बे उपवास की आवश्यकता पड़े तो किसी उपवास विशेषज्ञ की देखरेख में ही करना चाहिये। किसी नये रोग का प्रादुर्भाव होते ही उपवास शुरु करना चाहिये।

साधारणतः उपवास से सभी रोगों में लाभ होता है। जो भी बीमारी पैदा होती है वह देह में संचित विषाक्त पदार्थ एवं विकारों से। लम्बे उपवास कर लेने पर तमाम विषाक्त पदार्थ जल जाते हैं और रोग भी निकल जाता है।

जो लोग टी. बी., पागलपन, रक्त हीनता, हिस्टीरिया रोग से पीड़ित हों उन्हें उपवास नहीं करना चाहिये अपनी इच्छानुसार एक वक्त का भोजन न खाकर उपवास का आंशिक लाभ उठाया जा सकता है। जो लोग अधिक दुर्बल, कमजोर एवं बूढ़ें हों उन्हें भी उपवास वर्जित है। ऐसे लोग उपवास के बदले फल, फल का रस सलाद आदि खाकर उपवास का लाभ उठा सकते हैं।

## डूस (Anima)

एनिमा लेने की कई अवस्थायें हैं। बहुधा रोग के अनुकूल मेल बिठाकर एनिमा लेने से अधिक लाभ होता है। एनिमा किसी तख्ते पर सीधे लेटकर या दायीं या बायीं करवट भी लिया जाता है।
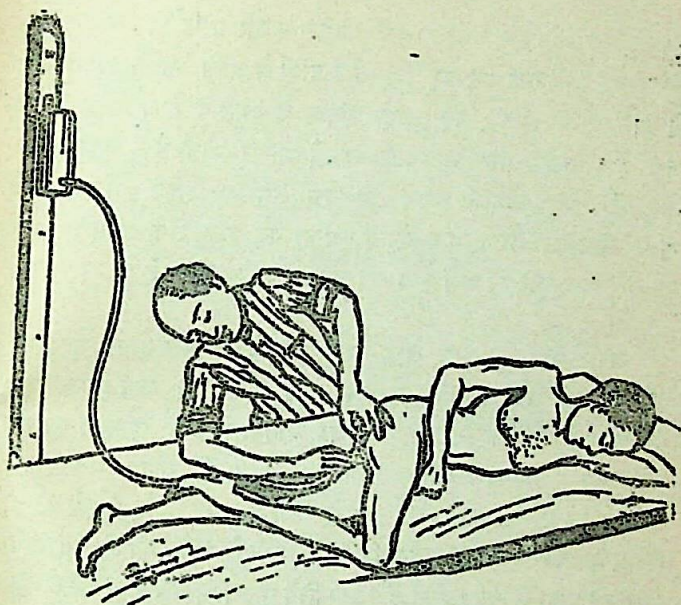
एनिमा

एनिमा लेने के लिये एनिमा पाट की आवश्यकता होती है। एनिमा लेने के पहले एनिमा पाट में आवश्यकतानुसार गरम या ठंडा पानी भरकर एनिमा पाट को लेटने की जगह से चार–पांच फीट की ऊँचाई पर लटका देना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर उसकी ऊँचाई–नीचाई में हेर फेर कर लेना चाहिये। एनिमा लेने के पहले नॉजल खोल कर थोड़ा पानी बाहर निकाल देना चाहिये, ताकि रबर की नली की हवा बाहर निकल जाय।

एनिमा नॉजल और गुदामार्ग में थोड़ा तेल लगाकर नॉजल धीरे-धीरे गुदामार्ग में प्रवेश करना चाहिये। एनिमा में कैथियेडर का प्रयोग किया जाय तो एनिमा लेने में और सुविधा होती है। एनिमा के पानी के भीतर जाते समय पेट को धीरे-धीरे बायें से दायें मालीश करना चाहिये और

पूरा पानी लेने के बाद दायें से बायें मालीश करना चाहिये। दस से बीस मिनट तक पानी रोक रख कर कुछ समय दायीं से बायीं करवट लेटे रहने से आंत का मल अच्छी तरह घुलकर एनिमा के पानी के साथ बाहर निकल जाता है। गुनगुने पानी से पेट की सफाई अच्छी होती है। एनिमा में नीबू का रस, उबलती नीम की पत्ती, नमक, शहद, सोडा, तेल आदि मिलाकर लिया जा सकता हैं, परन्तु यह सब रोग का मेल बिठा कर ही लेना चाहिये, वर्ना सादा ही एनिमा अच्छा होता है।

जब कभी शीघ्र पेट साफ करने की आवश्यकता हो तो जुलाब न लेकर फौरन एनिमा द्वारा पेट साफ किया जा सकता है। जहां जुलाब लेने से नुकसान की सम्भावना रहती है, वहां एनिमा से कोई नुकसान का डर नहीं रहता। जब कभी अधिक दिनों तक एनिमा को व्यवहार में लेने की आवश्यकता पड़े तो पहले दिनों गुनगुने पानी का तथा बाद में ठंडे पानी का प्रयोग करना चाहिये। क्योंकि गर्म पानी से आंतें कमजोर होती हैं और ठंडे पानी से सबल होती हैं। इसलिये कुछ दिन तक ठंडे पानी का एनिमा लेकर आंतें सबल कर लेनी चाहियें। ताकि आंतें दिन में दो बार पेट साफ करने योग्य हो जायें।

एनिमा लेने के पहले पेट पर गर्म ठंडा सेक ले लेने से पेट अच्छी तरह साफ हो जाता है। पेट सबल करने के लिये गर्म ठंडा सेक आसन से भी अधिक लाभकारी है। गर्म ठंडा सेक हमेशा तीन-तीन मिनट का तीन बार देना चाहिये। एनिमा के पानी की मात्रा आवश्यकतानुसार कम ज्यादा कर लेनी चाहिये। साधारण एनिमा में दो से तीन पीन्ट पानी की मात्रा रखनी चाहिये। परन्तु बच्चे और दुर्बल रोगी को हमेशा गुनगुने और थोड़े पानी का एनिमा देना चाहिये।

## "कटि स्नान" (Hip Bath)

शरीर में अधिकांश रोगों का प्रादुर्भाव कोष्ठबद्धता से ही होता है।
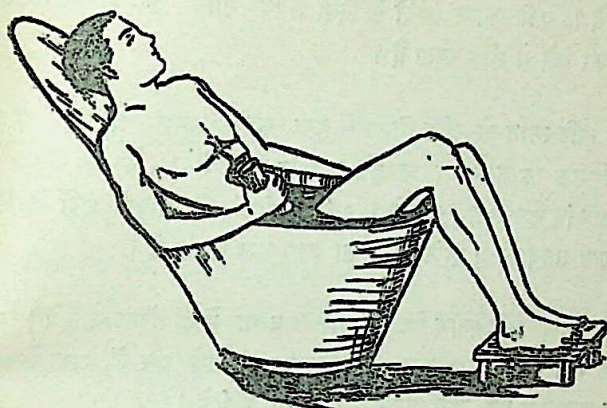
कटिस्नान

उसी से रोगों को बढ़ावा भी मिलता है। इसलिये हमेशा कोष्ठ साफ ही रखना चाहिये।

आज संसार के सभी देशों में कोष्ठ साफ रखने के लिये लाखों रुपयों की औषधियां बिक रही हैं। परन्तु ऐसा प्रमाण नहीं मिलता कि रेचक औषधियों के सेवन से स्थाई रूप से कोष्ठ साफ रहता हो! औषधियों का प्रयोग करने वाला कोष्ठवद्धता की जंजीर में और भी जकड़ता जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा में कटि स्नान द्वारा स्थाई रूप से दिन में दो बार कोष्ठ साफ किया जाता है। जिसमें औषधि हेतु एक पैसे का खर्च भी नहीं है।

कटि–स्नान लेने वाले को त्रिभुजाकार टप के अन्दर या किसी नाद में इतना पानी भरना चाहिये, ताकि उसमें बैठने पर पानी नाभि तक आ जाय। ऐसी अवस्था में पैर टब के बाहर किसी चौकी या ईंट के ऊपर रखने चाहिये। पीठ टब के पिछले हिस्से से लगी रहनी चाहिये। टब में बैठने के बाद किसी खुरदरे या मुलायम कपड़े या तौलिये से पेड़ू पर दाहिने से बायें और बायें से दाहिने हल्के हाथ से जल्दी–जल्दी मलना

चाहिये। कटि-स्नान शर्दी के दिनों में लेते समय ऊपर से एक कम्बल ओढ़कर लेने से ठीक रहता है।

कटि-स्नान दो-तीन मिनट से शुरू करके क्रमशः प्रतिदिन दो-तीन मिनट तक बढ़ाते जाना चाहिये। और अन्त में २० या ३० मिनट की सीमा बांध कर लेना चाहिये। गर्मी के दिनों की अपेक्षा शर्दी के दिनों में कम समय में ही कटि स्नान का काम चल सकता है।

किन्तु कटि-स्नान पेट की गर्म अवस्था में ही लेना चाहिये। यदि पेट गर्म न रहे तो आसन का प्रयोग कर पेट गर्म कर लें, अन्त में स्नान के बाद भी पेट रगड़ कर गर्म कर लेना चाहिये।

कटि स्नान कोष्ठ साफ करने के सिवा और बहुत से रोगों में लाभकारी सिद्ध हुआ है। कटि स्नान केवल कटि प्रदेश का स्नान होते हुये भी समस्त शरीर के लिये लाभकारी है। इससे स्नायु शान्त होते हैं जिससे शरीर अपना कार्य ठीक ढंग से करने लग जाता है। इसलिये कटि स्नान केवल कोष्ठ शुद्धि का नहीं बल्कि समस्त रोगों का नाशक है।

## गर्म-ठंडा कटि स्नान

गर्म ठंडे कटि स्नान के लिये दो टबों की आवश्यकता होती है। एक में गर्म तथा दूसरे में ठंडा पानी भर देना चाहिये। पानी की मात्रा उतनी ही हो जितनी की कटि स्नान में होती है। गर्म ठंडा कटि स्नान लेने के पहले सिर को खूब अच्छी तरह धोकर तथा एक भीगे तौलिये को सिर पर रखकर लेना चाहिये। तीन मिनट गर्म पानी में तीन मिनट ठण्डे पानी में स्नान करने को ही गर्म ठण्डा कटि स्नान कहा जाता है। इस क्रिया को तीन बार करना चाहिये। और अन्त में ठण्डे पानी में स्नान करना आवश्यक है। कटि प्रदेश की सभी ग्रन्थियों को सतेज बनाने के लिये इसके समान कोई दूसरा स्नान नहीं है। इस स्नान से सभी पेट के रोग

ठीक हो जाते हैं। पाचन शक्ति बढ़ती है। जननेन्द्रिय के सभी रोग चले जाते हैं।

## मेहन स्नान (Sitz Bath)

कटि स्नान के टब में ही मेहन स्नान लिया जा सकता है। टब में एक चौकी रख लेनी चाहिये। चौकी का अगला हिस्सा चन्द्राकार हो। टब के पानी की मात्रा इतनी होनी चाहिये कि वह चौकी की ऊपरी सतह के बराबर हो। टब का पानी काफी ठण्डा होना चाहिये।

पानी भरकर चौकी पर खुले बदन बैठना चाहिये। पैरों को अगल बगल बाहर रखें। बैठे-बैठे किसी मुलायम कपड़े या तौलिये को पानी में भिगोकर मूत्रेन्द्रिय के घूघट को बायें हाथ की अँगुलियों से खींच कर पकड़ें और उसी खाल के अग्रभाग को दाहिने हाथ से धीरे-धीरे धोयें। यह क्रिया दस मिनट से बीस मिनट तक करनी चाहिये।

स्त्रियां कपड़े को भिगोकर जननेन्द्रिय के बाहरी भाग के दोनों तरफ धीरे-धीरे धोयें। पानी किसी अवस्था में जननेन्द्रिय के अन्दर नहीं जाना चाहिये।

कमजोर रोगियों को मेहन स्नान बहुत लाभ पहुँचाता है। ऐसे रोगी जो बहुत ही कमजोर हैं, बिस्तर से उठ नहीं सकते, उनके लिये यह बहुत ही गुणकारी है। परन्तु उन्हें मेहन स्नान बिस्तर पर आराम करते हुये लेना चाहिये। यह स्नान कटि स्नान की भांति बहुत ही लाभकारी है। कारण कि इससे स्नायु शान्त होते हैं इसी से लाभ होता है। यह सभी तरह के स्नायुविक रोगियों व मानसिक रोगियों को लाभ पहुँचाता है।

## भाप स्नान (Steam Bath)

हम लोगों का शरीर जब विभिन्न प्रकार के कूड़े करकट से बोझिल हो उठता है तब प्रकृति उस कूड़े करकट को जलाने के लिये ज्वर उत्पन्न करती है। ज्वर की गर्मी शरीर में स्थित दूषित पदार्थों को जलाकर भस्म कर देती है। इस तरह प्रकृति आरोग्य की रक्षा में सदैव लगी रहती है।

प्राकृतिक चिकित्सा में इस कूड़े करकट को जलाने के लिये कृत्रिम ज्वर उत्पन्न किया जाता है; जिसको भाप स्नान कहा जाता है।
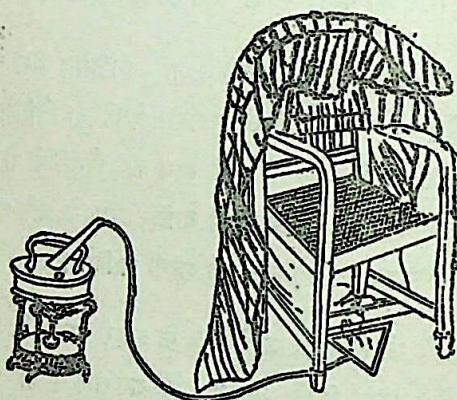
भाप स्नान

बेत की कुर्सी पर बैठ कर आराम से भाप स्नान लिया जा सकता है। कुर्सी पर बैठने के बाद एक कम्बल से आगे और दूसरे कम्बल से पीछे का हिस्सा गले से लेकर पैर तक इस प्रकार ढक देना चाहिये कि भाप बाहर न निकल सके। ऐसी स्थिति में बैठने के बाद भाप अन्दर छोड़नी चाहिये। भाप उत्पन्न करने के लिये भाप उत्पादक यन्त्र का व्यवहार करना चाहिये। यह एक प्रकार का टीन का बना हुआ यन्त्र रहता है, जिसमें नल की तरह टीन की टोटी लगी रहती है, उसी टोटी

से रबर द्वारा भाप कुर्सी के नीचे छोड़नी चाहिये। यह सबसे अच्छा एवं सरल उपाय है। इसके अतिरिक्त कुर्सी के नीचे एक उबलते हुये पानी की हांडी भी प्रयोग में लाई जा सकती है। भाप स्नान लेने के बाद शरीर को भीगे तौलिये से अच्छी तरह पोंछ लेना आवश्यक है। भाप स्नान लेते समय सिर एवं हृदय पर गीला गमछा रख लेना चाहिये। शरीर के विकारों को बाहर निकालने के लिये यह बहुत ही उत्तम उपाय है। आज कल भाप स्नान लेने के लिये एक विशेष प्रकार की लकड़े या टीन की बनी वाष्प पेटी को प्रयोग में लाया जाता है। खर्चीली होते हुए भी भाप स्नान लेने के लिये यह बहुत ही उपयोगी है। भाप स्नान पन्द्रह से बीस मिनट तक लिया जा सकता है। अधिक देर तक भाप स्नान लेने से लाभ के बदले हानि होने की सम्भावना रहती है।

हर प्रकार के अजीर्ण रोग एवं गर्दन की वात, गांठों की जलन, मूत्र-ग्रंथी की सूजन तथा खाज, खुजली आदि चर्म रोग में विशेष लाभ पहुंचाता है। गर्मी, सुजाक, आंख की सूजन, लीवर या पित्तकोष का रोग भी दूर करने के लिये भाप स्नान प्रयोग में लाया जाता है। जिनको बैठे-बैठे काम करना पड़ता है और जो अधिक भोजन करते हों उन्हें हर पन्द्रह दिन में भापस्नान लेना आवश्यक है। भाप स्नान से शरीर के विभिन्न दूषित पदार्थ पसीने के साथ बाहर निकल जाते हैं।

हृदय रोग, रक्त-हीनता, स्नायुविक दुर्बलता, मानसिक दुर्बलता टी. बी. आदि रोग से ग्रसित व्यक्ति को कभी भी भाप स्नान नहीं लेना चाहिये तथा कमजोर रोगी को भी भाप स्नान नहीं लेना चाहिये।

## पैर का गर्म स्नान (Hot foot bath)

दोनों पावों को सह्य गर्म पानी में डुबाकर गर्म पानी की बाल्टी के साथ गले तक कम्बल से ढककर बैठने का नाम है पैर का गर्म स्नान। इस समय सिर पर गीला तौलिया रख लेना चाहिये तथा बाद में गुनगुने
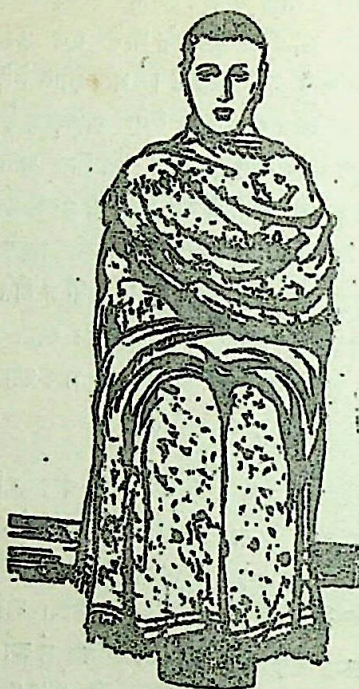
पैर का गर्म स्नान

पानी में तौलिया भिगोकर शरीर को पोंछ कर ठंडा कर लेना चाहिये, इससे लाभ होता है भाप स्नान की तरह।

दुर्बल रोगी जिन्हें भाप स्नान नहीं दिया जा सकता उन्हें पैर का गर्म स्नान दिया जाना चाहिये। शरीर के ऊपरी भागों में खून की अधिकता कम करने के लिये यह स्नान बहुत ही उपकारी है, क्योंकि खराब खून का वेग पांव की ओर मुड़ जाता है। इसी कारण सर का दर्द कम करने के लिये इसके समान दूसरा इलाज नहीं है। स्त्रियों के जरायु, डिम्बकोष, मासिक धर्म में पैर का स्नान बहुत लाभकारी है।

## घर्षण स्नान ( Cold Frection )

गीले गमछे से दाहिने हाथ को ढककर बायें हाथ से गमछे का बाकी भाग अच्छी तरह पकड़कर दाहिने हाथ से रोगी के देह को घर्षण करने से घर्षण स्नान हो जाता है। पहले शरीर का एक भाग घर्षण कर उसे ढककर फिर दूसरे भाग में घर्षण शुरू करना चाहिये। इसी तरह बारी–बारी समस्त शरीर को घर्षण करना चाहिये। घर्षण स्नान शरीर की गर्म अवस्था में ही लेना चाहिये और घर्षण करके भी गर्म कर लेना चाहिये।

दुर्बल रोगी को घर्षण स्नान देते समय गर्म जल की एक थैली पावों के नीचे रखकर करना चाहिये।

हृदय को स्वस्थ एवं सबल बनाने के लिये इसके समान दूसरा स्नान नहीं है।

**स्नान**–रोगी को एक साथ अधिक समय तक स्नान न कराकर पहले उसे थोड़ी देर तक का तौलिया स्नान कराना चाहिये। आदत पड़ जाने पर पूर्ण स्नान कराना चाहिये। शरीर की गर्म अवस्था में स्नान करना हितकर है। यदि शरीर गर्म न हो तो मालीश या धूपस्नान लेकर स्नान करना चाहिये। स्नान करने के बाद भी सूखी मालीश करके बदन गर्म करना अत्यन्त लाभदायक है। ठंडे पानी के स्नान से जीवन शक्ति बढ़ती है। गर्म पानी से स्नान नियमित करने पर चर्म अपनी कार्यक्षमता खो बैठता है। इसलिये हमेशा ठंडे पानी से ही स्नान करना आवश्यक है। ठंडक की मौसम में अधिक देरतक स्नान नहीं करना चाहिये। गर्मी के दिनों में बहुतेरे लोग तीनों बार अर्थात् सुबह, दोपहर एवं शाम को भी स्नान करते हैं। ठंडे पानी से स्नान करने पर पाकस्थली से पाचक रस अधिक निकलता है और भूख बढ़ती है। छोटे बच्चों को भी



अवस्थानुसार ठंडे पानी से स्नान कराकर बदन सूखे तौलिये या कपड़े

से पोंछ कर गर्म कर देना चाहिये। परन्तु खाना खाने के तीन घंटे बाद ही स्नान करना लाभकारी होगा।

ठंडे पानी के स्नान से कितने ही रोग आसानी से दूर किये जा सकते हैं। इससे नये रोगों का आक्रमण तो जाता रहता ही है साथ साथ दूसरे रोग भी दूर हो जाते हैं। इस से हृदय बहुत ही मजबूत होता है। तालाब, नदी, झील, समुद्र, झरने आदि में डुबकी लगाकर स्नान करना अत्यन्त हितकारी है। शहर के लोगों को हौज में स्नान करना चाहिये। स्नान करने के पहले यह देखना आवश्यक है कि पानी का तापक्रम हमारे शरीर के तापक्रम से कम है या ज्यादा। यदि पानी का तापक्रम कम है तो उसका फल तुरन्त मिलता है और यदि शरीर का तापक्रम कम है तो मालीश करके गर्मी बढ़ा लेनी आवश्यक है।

मासिक अवस्था में स्त्रियों को थोड़े समय तक ठंडे पानी से स्नान कर लेना चाहिये इससे रज स्राव खूब अच्छी तरह होता है। स्वस्थ मनुष्य को दिन में दो बार स्नान कर लेना आवश्यक है। थके मांदे शरीर की अवस्था में कभी स्नान नहीं करना चाहिये। स्नान के समय शरीर को खूब तौलिये से रगड़ने से रोमकूप खुल जाते हैं।

## धूपस्नान

किसी ऐसी जगह पर बिना वस्त्र लेट कर धूप लेनी चाहिये, जहां धूप तो अधिक हो पर हवा कम। जमीन, चटाई, खाट, तख्ता, दरी, कम्बल डालकर नंगे या मामूली काम चलाऊ वस्त्र पहनकर लेटना चाहिये। ऐसी दशा में सिर को छांव में रखना चाहिये या गीला गमछा बांध लेना चाहिये। जितनी देर तक धूप अच्छी लगे उतनी ही देर तक धूप में रहना हितकर होता है। धूप स्नान के लिये सुबह की धूप अच्छी होती है।

पहले दिन अधिक समय तक धूप में न बैठकर क्रमशः समय बढ़ायें। धूप स्नान के बाद बदन की गर्म अवस्था में ही स्नान करना चाहिये। ऐसा कर लेने से शरीर के सभी यंत्रों में उद्दीपन आ जाता है क्योंकि सूर्य ही सभी ताकतों की जड़ है। धूप स्नान से शरीर के बहुत से विष पसीने के साथ बाहर निकल जाते हैं और विटामिन डी भी प्रचुर मात्रा में शरीर को मिल जाता है।
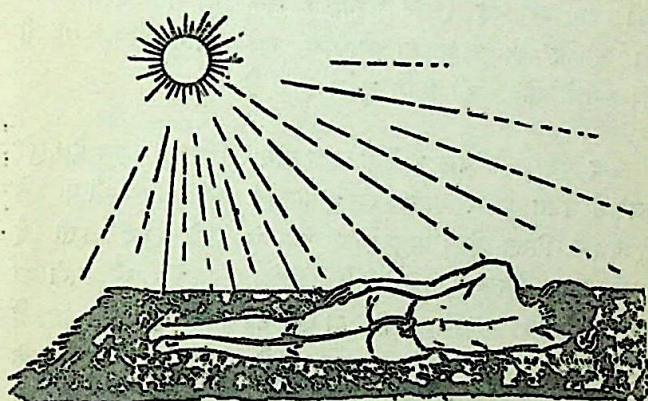
धूप स्नान

सूर्य की किरणों से सफेद एवं लाल कण रक्त में बढ़ते हैं। सूर्य की किरणों में जो अधिक आवश्यकीय वस्तु है, वह है अल्ट्रा वॉयलेट रश्मि। सूर्य की किरणों में सात रंग होते हैं, जो सभी गुणसम्पन्न रहते हैं। धूल, धुआं, कुहरे और बादल के रहने से यथेष्ट अल्ट्रा वॉयलेट रश्मियां पृथ्वी पर नहीं पहुँच पातीं। शहरों की अपेक्षा देहातों में इसकी विशेष सुविधा मिलती है। सूर्य की किरणें जहां पड़ती हैं वहां कभी दुर्गंध नहीं आती। सूर्य की किरणों में तमाम गन्दगी को दूर करने की क्षमता होती है। जब ये किरणें पृथ्वी की बाह्य एवं आन्तरिक गंदगी

दूर कर सकती हैं तो उन्हीं के आधार पर गठित शरीर की गंदगी क्यों न दूर कर देंगीं ?

## वायु स्नान

जंगली जीवों की अपेक्षा मानव समाज अधिक बीमारियों का शिकार बना रहता है. इसका कारण है मुक्त हवा में विचरण करने वाले जानवरों को हमेशा शीतल, मन्द, सुगन्ध वायु मिला करती है और मनुष्यों को उसकी प्राप्ति दुर्लभ होती है ।

बन्द हवा में निवास करने से रक्त प्रायः दूषित ही रहता है। बुरे भोजन से जिस प्रकार स्वास्थ्य खराब होता है उसी प्रकार गन्दी वायु से भी स्वास्थ्य गिरता है। वायु स्नान लेने के लिये सदैव बहती हुई शीतल वायु की आवश्यकता होती है जिससे वह शरीर की गर्मी का हरण कर सके । शरीर यदि अधिक ठंडक महसूस कर रहा है तो उसे रगड़कर गर्म कर लेना आवश्यक है। देहात की तरह शहर के लोगों को ऐसी सुविधा नहीं मिलती कि वे खुली हवा में टहल सकें।

वायु स्नान जिस प्रकार स्वास्थ्य रक्षा का एक प्रधान उपाय है उसी प्रकार रोग की हालत में भी लाभप्रद है। रोग की अवस्था में गले तक ओढ़कर सोया जा सकता है। मुँह ढककर सोने से विषाक्त श्वास फिर शरीर के अन्दर ही प्रवेश कर जाता है। इसलिये हमेशा हवादार स्थान में सोना आवश्यक है।

वायु से अधिक लाभ होता है स्थान परिवर्तन से। प्रायः रोगी एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने से स्वस्थ हो जाता है। विभिन्न जलवायु का विभिन्न रोगों पर भिन्न भिन्न प्रकार से असर पड़ता है।



स्नायुविक रोग से पीड़ित व्यक्ति को वायु स्नान अधिक हितकर है।

बुखार, हैजा और अन्य संक्रामक रोगों में वायु स्नान से लाभ का विशेष महत्त्व है। खुली हवा में टहलने से फेफड़े का कोई भी रोग नहीं होता। यदि खांसी का प्रकोप हो तो तुरन्त कपड़े उतार कर यदि खुली हवा में टहला जाय तो तात्कालिक लाभ होता है। यक्ष्मा रोग में भी वायुस्नान लाभकारी है। पुराने रोगों को नष्ट करने के लिये खुली हवा में टहलना आवश्यक है। अन्त में वायु स्नान लेते लेते चमड़ी की हालत इतनी सुधर जाती है कि ज्यादा ठंड लगने पर भी कोई नुकसान नहीं होता।

## गर्म ठंडी पट्टी

किसी भी अंग विशेष को एक से पांच मिनट गर्म सेक के बाद उस स्थान को ठंडे पानी में भीगे कपड़े से ठंडा कर लेने से गर्म ठंडी पट्टी हो जाती है। इसी प्रकार इस क्रिया को तीन बार करना चाहिये।

संसार में रक्त ही एक कुदरती डाक्टर है। जिसके द्वारा हमारी चिकित्सा की जा सकती है। जिस स्थान पर सेक दी जाती है उस स्थान पर खून अपना सब मसाला लेकर आ जाता है और जब ठंडा सेक दिया जाता है तब रक्त अपने साथ दूषित पदार्थों को लेकर भी वापस चला जाता है। कारण कि रक्त का स्वभाव है, वह जहां जाता है वहां की खराब चीज उठा लेता है और अपने पास की उस अच्छी वस्तु को जो उस अंग के लिये आवश्यक समझता है उसे वहीं छोड़ देता है। इस तरह से रक्त के आवागमन से किसी भी प्रहारित अंग की मरम्मत शीघ्र हो जाती है। इस क्रिया का प्रभाव फायर ब्रिगेड की तरह होता है। जिस तरह शहर की रक्षा के लिये फायर ब्रिगेड जहां कहीं कुछ मकान गिरने आदि से व्यक्तियों के फस जाने की खबर पाते ही वहां जाते हैं और आवश्यकतानुसार उनकी मदद करते हैं और आते समय वहां के घायल एवं मुर्दों को उठा लाते हैं, उसी प्रकार खून भी शरीर की रक्षा करता है।

**ठंडी गर्म पट्टीः—** यह पट्टी गर्म ठंडी पट्टी की तरह है फरक केवल इतना है कि यह ठंडे सेक से शुरू होती है और वह गर्म से।

**गले की पट्टीः—** एक गीला निचोड़ा हुआ कपड़ा गले के चारों तरफ दो तीन तह लपेट कर ऊपर से मफलर से अच्छी तरह से ढक लेने से यह पट्टी हो जाती है।

**छाती की पट्टीः—** एक भींगे हुये कपड़े द्वारा शरीर की गर्मी के अनुसार दो से तीन बार दोनों कन्धों के साथ छाती और पीठ को चारों तरफ से घुमाकर लपेट दें और ऊपर से किसी गर्म कपड़े द्वारा अच्छी तरह से ढक दें ताकि बाहर की हवा न लग सके, इसी को छाती की पट्टी कहते हैं।

छाती की पट्टी
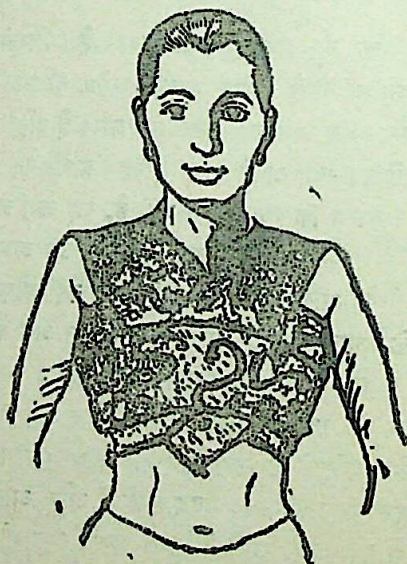
**मिट्टी की पट्टी :—** इसको एक इन्च मोटा और आवश्यकतानुसार लम्बा चौड़ा बनाना चाहिये। मिट्टी की पट्टी बनाने के लिये जमीन से एक फुट नीचे तह की साफ मिट्टी लेनी चाहिये जिसमें खाद गोबर या अन्य किसी प्रकार की गन्दगी न हो, कंकड़ पत्थर न हों। मिट्टी मुलायम मक्खन की तरह होनी चाहिये। बलुही मिट्टी अच्छी होती है। यदि बलुही मिट्टी न मिले तो साफ सुथरी मिट्टी में बालू मिलाकर पट्टी बनानी चाहिये। मिट्टी की पट्टी पेड़ू या अन्य किसी आवश्यक स्थान पर रखी जा सकती है। मिट्टी न मिलने पर जल पट्टी से काम लिया जा सकता है। एक का काम दूसरे से लिया जा सकता है।
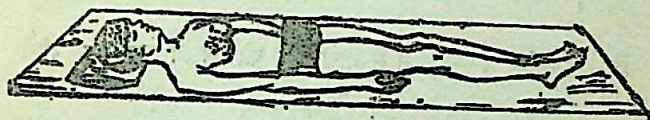
पेड़ू और सिर की पट्टी

**पेट की लपेट :—** सात या आठ फुट लम्बा और छः सात इञ्च चौड़ा सूती कपड़ा लेकर ठण्डे पानी में भिगोकर निचोड़कर नाभी से लेकर नीचे कमर के भाग तक इस तरह लपेटना चाहिये कि कपड़ा त्वचा को चारों तरफ छूता रहे। और फिर ऊपर से इतनी ही लम्बी चौड़ी ऊनी कपड़े की पट्टी लपेटनी चाहिये। उसे सेफ्टीपिन या रस्सी से इस तरह बांध देना चाहिये कि ढीला न होने पाये। इसका प्रयोग आवश्यकतानुसार एक से दो घण्टे तक करना चाहिये और आदत पड़ जाने पर यह रात भर ली जा सकती है।

पेट को सबल एवं साफ करने के लिये यह जादू के समान प्रभाव डालती है। दुर्बल लोगों का पेट साफ करने के लिये इस से बढ़कर दूसरा उपाय नहीं है। अतः इसका प्रत्येक घर में रहना आवश्यक है और इसको उपयोग में लाना चाहिये।

**जलपट्टी:—** ठंडे पानी में भिगाये हुये कपड़े का टुकड़ा शरीर के किसी भी अंग में रखकर गर्म होने के पहले ही उसे बदल देने को जलपट्टी या ठंडी पट्टी कहते हैं।

**धड़ की लपेट :—** कमर के ऊपर और गर्दन के नीचे हाथ और पैर को छोड़कर जो शरीर है उसी को लपेट देने का नाम है धड़ की लपेट।

**पैर की लपेट :—** घुटने से नीचे पांव की झिल्ली तक एक भीगे निचोड़े हुये कपड़े से लपेट कर ऊपर से गर्म कपड़े से बांध देने को ही पैर की लपेट कहते हैं। यह लपेट शरीर के ऊपरी भाग के सभी रोगों में जादू की तरह लाभ पहुंचाती है। कारण यह है कि ऊपर का दूषित रक्त पांव में खींच लिया जाता है, और उसकी जगह शुद्ध रक्त पहुंचता है।

**बस्ती देश की लपेट :—** एक भीगे गमछे को काछा मारकर पहन लेना चाहिये और ऊपर से एक ऊनी कपड़े को इस तरह पहन लें कि गीला गमछा बिलकुल ढक जाय और उसमें ताप पैदा होकर रक्ताभिसरण तीव्रगति से होने लगे, इससे बस्ती देश के अंग-प्रत्यंग सबल बन जाते हैं तथा उस भाग में होने वाले सभी प्रकार के रोग दूर हो जाते हैं।

**भीगी चादर की लपेट :—** एक भीगी चादर या धोती द्वारा रोगी को गले से लेकर पैर तक ढक कर उसके बाद तीन चार कम्बल से उसको लपेट देने का नाम है भीगी चादर की लपेट। इसमें रोगी को एक घण्टे तक रखना चाहिये। बाद में रोगी का पूरा शरीर एक गर्म पानी में भीगे गमछे से पोंछ देना आवश्यक है। इस लपेट से भाप स्नान के समान ही लाभ होता है। कुछ माने में शरीर का विष बाहर निकालने में भाप स्नान से आगे है मोटापा घटाने का यह मुख्य इलाज है। जिन रोगों में भाप स्नान वर्जित है उनमें भीगी चादर की लपेट भी।

ठण्डे पानी में भीगे रहने पर भी इसका गुण शीतल नहीं होता। लगभग तीन—चार मिनट तक ठण्डी रहती है। फिर शरीर के ही ताप से गर्म हो जाती है। पहले ठंडक लगने पर रक्त अन्दर की तरफ चला जाता है। लेकिन गर्म होने पर बाहर की तरफ दौड़ता है। तब अपने साथ नाना प्रकार के दूषित पदार्थ रोम कूपों द्वारा बाहर निकाल देता है। लपेट खोलते समय उसमें से आदमी जिस चीज (नशीली) का प्रयोग नित्य करता है उसी की दुर्गन्ध निकलती है। जैसे तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट आदि। और शरीर के विष से चादर पीली पड़ जाती है।

पुराना मलेरिया, पीलिया, चेचक स्थूलता, स्नायुविक दुर्बलता आदि रोग इससे नष्ट हो जाते हैं। परन्तु स्नायुविक दुर्बलता में विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि लपेट के अन्दर समशीतोष्णता अर्थात् शरीर के ताप की अवस्था समान रहे।

छोटे-मोटे रोग साधारणतः एक बार की लपेट में ही अच्छे हो जाते हैं। पुराने रोगों में बार—बार प्रयोग करने की आवश्यकता पड़ती है। हृदय की दुर्बलता, अत्यधिक स्नायुविक दुर्बलता में, कमजोरी में अधिक देर तक लपेट का उपयोग नहीं करना चाहिये।



**भीगी चादर की ठंडी लपेट :—** यह लपेट भीगी चादर की

लपेट की ही तरह होती है। अन्तर केवल इतना है कि इसमें सिर्फ एक कम्बल का प्रयोग किया जाता है। अन्दर की चादर मोटी एवं कम निचड़ी अवस्था में ही प्रयोग में लाई जाती है। पांच-सात मिनट में लपेटने के बाद इसे खोलकर फिर ठण्डा करके तुरन्त इसका व्यवहार किया जाता है। बुखार कम करने का सबसे सरल और अच्छा उपाय है। इसके द्वारा रोगी का बुखार जितना चाहे कम किया जा सकता है। इसका प्रयोग एक ही साथ कई बार किया जा सकता है।

## चादर की लपेट

इस लपेट लेने की एक विशेष प्रकार की विधि है। पहले आवश्यकतानुसार समझकर एक खाट पर दो चार कम्बल बिछा दिये जाते हैं, फिर ठण्डे पानी में एक भिगोकर निचोड़ी हुई चादर बिछा दी जाती है। बाद में धड़को लपेटने के लिये एक और गमछा इस तरह चादर पर बिछा देना चाहिये कि रोगी के धड़ को लपेटा जा सके। चादर पर सोने से पहले रोगी को अच्छी तरह सिर, मुंह, गर्दन धो देना चाहिये। फिर रोगी को खाट पर लिटा देना चाहिये। प्रथम चादर पर बिछे गमछे से रोगी के हाथ बाहर रख कर धड़ को लपेट देना चाहिये फिर रोगी के दोनों हाथों को बगल में दबाकर कम्बल पर बिछी चादर से अच्छी तरह ढक देना चाहिये। जिससे रोगीका सारा शरीर ठण्डी चादर के सम्पर्क में आ जाये। इसके पश्चात् एक कम्बल से इस प्रकार ढक देना चाहिये कि कम्बल सभी ओर से चादर के ऊपर से शरीर को ढक ले। इसके बाद बाकी कम्बलों से जो कि खाट पर बिछे हों उनके द्वारा रोगी को अच्छी तरह ढक देना चाहिये। रोगी को लपेट देने के समय भीगे गमछे द्वारा उसके सिर को बांध रखना चाहिये और गर्म होते ही बदलते रहना उचित है।
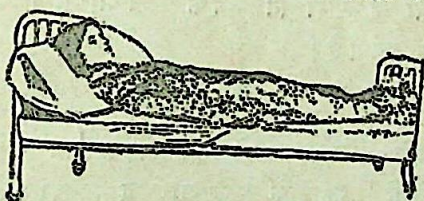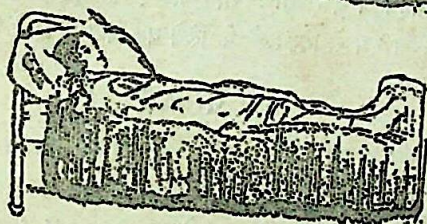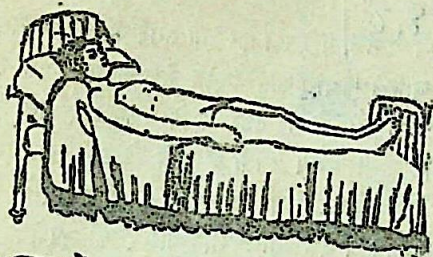
चादर की लपेट

## सूखी लपेट ( पैक )

लपेट के भीतर भीगी चादर न रखकर केवल कम्बल से ढककर लपेट रखने को सूखी पैक कहा जाता है। इसका उद्देश्य रहता है शरीर से पसीना निकालना। इसलिये गर्म पैक के अन्दर गर्म पानी की थैलियां सजा देने से काफी पसीना निकलता है। लपेट के बाद रोगी को घर्षण मालीश लेनी चाहिये। इसका लाभ भापस्नान के समान है। भापस्नान का साधन न रहने पर इस पैक द्वारा काम लिया जा सकता है।



**मूत्र यन्त्र की लपेट (गुर्दे की गर्म ठंडी पट्टी) :—** छाती के

निचले हिस्से में ठंडी पट्टी रख कर इसी समय कमर और नितम्ब के ऊपर सेक देना चाहिये। पांच सात मिनट सेक के बाद उस स्थान को एक मिनट तक ठंडे तौलिये से ठंडा करके फिर गर्म थैली से गर्म करना चाहिये और इसी समय छाती के नीचे की ठंडी पट्टी हटा कर फलालेन द्वारा रगड़ के गर्म कर लेना आवश्यक है और बाद में फिर ठंडी पट्टी रख देनी चाहिये। एक साथ तीन बार इसका उपयोग करना चाहिये। पेशाब यथोचित रूप से निकालने के लिये यह श्रेष्ठ विधि है।

## ठंडी मालिश

घर्षण स्नान की तरह रोगी के शरीर को ठंडे पानी में भीगे गमछे द्वारा शरीर पोंछ देने को ठंडी मालिश कहते हैं। यह बुखार से पीड़ित रोगी के शरीर की पीड़ा निकालने के लिये और बुखार कम करने का बहुत गुणकारी प्रयोग है।

## सूखी मालिश

एक गमछे द्वारा शरीर को खूब रगड़कर लाल कर देने को सूखी मालिश कहते हैं। नहाने के पहले और बाद में इसका उपयोग कर लेने से स्नान का आनन्द और लाभ दोनों बढ़ जाते हैं।

**तेल मालिशः—** विभिन्न देश के लोग विभिन्न रोगों में मालीश का उपयोग करते हैं। मालिश करने से सारे शरीर में खून दौड़ने लगता है। इसी कारण मालीश से लाभ होता है। मालीश करना भी एक कला है। उसकी जानकारी रखकर मालीश करना लाभकारी होता है। मालीश में हमेशा तिल्ली, सरसों, ओलिव आइल, नारियल आदि शुद्ध तेलों को ही प्रयोग में लाना चाहिये। बाजारु, सुगंधित, अविश्वसनीय तेल का प्रयोग मालीश के लिये ठीक नहीं। मालीश में घर्षण, दलन, कम्पन, थपकी, मुक्की, मरोड़ आदि विधियों का प्रयोग किया जाता है। पूरी जानकारी किसी मालीश विशेषज्ञ से कर लेनी चाहिये और पूर्णतः अभ्यस्त हो जाने पर इसका उपयोग करना चाहिये।

# रामतीर्थ मासिक से लाभ उठाइये

卐卐卐

(१) शिक्षाप्रद और मनोरंजक सामाजिक कहानियां,
(२) उच्चकोटि की कलात्मक और भावपूर्ण कविताएं,
(३) अष्टांग योग से तन–मन की शान्ति,
(४) वेदान्त,
(५) रामायण,
(६) आपके प्रश्नों का उत्तर,
(७) जीवन जीने की कला,
(८) प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा, आसनों के द्वारा रोगों का निवारण आदि अनेक बातों से आप प्रतिमास परिचित होते रहेंगे।

विशेष सूचनाः— शारीरिक आरोग्य, मानसिक शान्ति तथा आत्म–दर्शन के लिये 'रामतीर्थ' मासिक पढ़िये तथा जीवन में उपस्थित होनेवाली किसी प्रकार की कठिनाई के समय आश्रम संचालक की सलाह लीजिये।

प्रकाशक
श्री रामतीर्थ योगाश्रम,
दादर, बम्बई १४ (मध्य रेलवे)
टेलिफोन : ४४२८९९

अधिकांश डाक्टर, वैद्य, हकीम चिकित्सा-कार्य धनोपार्जन हेतु करते हैं। उन्हें रोगी के उपकार-अपकार की किंचित् मात्र भी चिन्ता नहीं रहती, परन्तु सभी को इसी श्रेणी में रखना असंगत है। कुछ तो सेवा भावी भी होते ही हैं। प्राकृतिक चिकित्सक का मूल कार्य तो रोगी की सेवा करना है। स्वयं मैंने कुष्ट रोगी तक की सेवा अपने हाथों कर आनन्द का अनुभव किया है। जो कुछ सेवा दिखावे के लिये की जाती है उसका अन्त में कोई अर्थ नहीं होता परन्तु जो कुछ परोपकार की भावना से बिना किसी दिखावे के किया जाता है उससे आत्मानन्द मिले बिना नहीं रहता।

यह मान लेना कि औषधि के बिना रोग से मुक्ति नहीं पाई जा सकती, भारी भूल है। रोग निवारणार्थ चिकित्सा करना उचित है परन्तु उसके लिये दवा खाना ठीक नहीं, क्योंकि दवा से रोग दबता है निकलता नहीं। चिकित्सा तो ऐसी ही होनी चाहिये जो कि बीमार होने से बचाये।

—गांधीजी

प्राकृतिक चिकित्सा के प्रति पूज्य बापूजी के जो अनन्य विचार थे उन्हें ही साकार करने हेतु प्रयत्न करना हमारा कर्तव्य है।

—मुन्निलाल सिंह